पंजीयन संख्या : 68939/98

ज्ञान तत्व

सत्यता एवं निष्पक्षता का निर्भीक पाक्षिक

FEB 2025

अंक - 4

466

सुरक्षा और न्याय के अतिरिक्त, सभी कार्य कोई अन्य इकाई करे :- 4

वर्तमान न्यायिक सिद्धांत, न्याय में बाधक :- 5

विशेष लेख :

बढ़ती बेरोजगारी: कितनी सच्चाई, कितना भ्रम 6

सिंहावलोकन

नई समाज व्यवस्था

3

सरकारी कर्मचारी समाज को गुलाम बनाने में मददगार:-

8 **घुसपैठ और आयात पर अंकुश होना चाहिए :-**

9 **घटती समझदारी पर काम करना सबसे ज्यादा जरूरी :-**

11 **व्यवस्था परिवर्तन एकमात्र मार्ग, सत्ता परिवर्तन नहीं :-**

12 **राइट टू रिकॉल राजनेताओं पर समाज का अंकुश :-**

13 **घुसपैठी मुसलमान पलायन को मजबूर :-**

पत्र व्यवहार का पता

बजरंग लाल अग्रवाल पोस्ट बाक्स 15, रायपुर (छ.ग.) 492021

website : margdarshak.info

प्रकाशक, संपादक व स्वामी - बजरंगलाल

9617079344

mail : Support@margdarshak.info

नई समाज व्यवस्था पर मुनि जी के लेख

'केंद्र सभा' समाज का प्रतिनिधित्व करें :-

1 फरवरी प्रातः कालीन सत्र नई समाज व्यवस्था पर चर्चा। हमने जो नई सामाजिक व्यवस्था की योजना बनाई है, उसमें राजनीतिक व्यवस्था में आमूल चूल बदलाव दिखेगा। इस राजनीतिक व्यवस्था में केंद्र सरकार अलग होगी और केंद्र सभा अलग होगी। सारे कार्य केंद्र सभा करेगी, केंद्र सरकार नहीं। केंद्र सभा को अधिकार नीचे से परिवार सभाएं, ग्राम सभाएं मिलकर देंगी और यही सब मिलकर केंद्र सभा का गठन करेंगे। सिर्फ पांच कार्य केंद्र सरकार के पास रहेंगे और वह कार्य हैं: सेना, पुलिस, वित्त, विदेश, न्याय। पांच के अतिरिक्त सारे विभाग केंद्र सभा संभालेगी। पांच विभागों का केंद्र सरकार को बजट भी दिया जाएगा। केंद्र सरकार को सिर्फ एक टैक्स लगाने की छूट होगी कि वह अधिकतम दो प्रतिशत सुरक्षा कर लगा सकती है और इसके बदले में केंद्र सरकार प्रत्येक इकाई को सुरक्षा और न्याय की गारंटी देगी, अर्थात यदि किसी प्रकार का कोई अपराध होता है, तो उसे रोकना केंद्र सरकार की जिम्मेदारी होगी, स्वैच्छिक कर्तव्य नहीं। क्योंकि इसी कार्य के लिए हम सरकार को टैक्स दे रहे हैं। पांच विभागों के अतिरिक्त किसी कार्य में केंद्र सरकार की न वरीयता होगी, न हस्तक्षेप होगा। इस तरह केंद्र सभा केंद्र सरकार की तुलना में अधिक प्रभावकारी होगी। हम चाहते हैं कि हमारी केंद्र सभा समाज का प्रतिनिधित्व करे और केंद्र सरकार समाज की मैनेजर बनकर काम करे।

सरकारी कर्मचारी समाज को गुलाम बनाने में मददगार:-

2 फरवरी प्रातःकालीन सत्र नई समाज व्यवस्था पर चर्चा। हम लोग देश में जो नई राजनीतिक व्यवस्था लागू करेंगे, उसमें सिर्फ पांच विभाग ही होंगे, अन्य कोई विभाग नहीं होगा। इसका अर्थ हुआ कि सरकारी कर्मचारी बहुत कम हो जाएंगे। वर्तमान में जो सरकारी कर्मचारियों की संख्या लगभग दो करोड़ है, वह घटकर बहुत कम हो जाएगी। इन सरकारी कर्मचारियों को भी वेतन बाजार दर पर ही मिलेगा, मनमाना नहीं। अब तक सरकारें सरकारी कर्मचारियों को एक दलाल के रूप में बहाल करती हैं, जो पूरे समाज को गुलाम बनाने में सरकार की सहायता करते हैं। अब नई सरकार को इस प्रकार के दलालों की जरूरत नहीं है, काम करने वालों की जरूरत है। नई सरकार योग्यता के अनुसार बाजार दर के हिसाब से ही वेतन और सुविधा देगी, इससे टैक्स बहुत कम हो जाएगा। जनता पर बोझ नहीं रहेगा और सरकारी

कर्मचारी ब्लैकमेल भी नहीं कर सकेंगे। नई व्यवस्था में विधायिका के लोगों का वेतन नहीं होगा, कार्यपालिका के लोगों का हो सकता है। विधायिका के लोगों के पावर भी नहीं रहेंगे, इस तरह विधायिका का दबाव भी कम हो जाएगा। विधायिका के लोग सिर्फ कानून बना सकेंगे, कार्यपालिका में कोई दखल नहीं देंगे।

नीति के विरुद्ध सामूहिक क्रिया अपराध की श्रेणी में :-

3 फरवरी प्रातः कालीन सत्र नई समाज रचना पर चर्चा। हम नई राजनीतिक व्यवस्था में किसी भी प्रकार के हड़ताल चक्का जाम आंदोलन पर पूरा प्रतिबंध लगा देंगे। कोई भी व्यक्ति अनशन हड़ताल चक्का जाम कुछ भी कर सकता है वह भूख हड़ताल करके आत्महत्या भी कर सकता है लेकिन किसी भी व्यक्ति को यह छूट नहीं होगी कि वह दूसरे के मौलिक अधिकारों में बाधा डालें। यदि किसी व्यक्ति के किसी कार्य से दूसरों की स्वतंत्रता में बाधा पहुंचती है तो उसे अपराध माना जाएगा। इस तरह आप किसी भी प्रकार की न सामूहिक हड़ताल कर सकते हैं न आंदोलन कर सकते हैं न चक्का जाम कर सकते हैं लोकतंत्र में आपको लोकतांत्रिक तरीके से सरकार बनाने और बदलने का अधिकार प्राप्त है लेकिन आप किसी सरकार के विरुद्ध सिर्फ विचार व्यक्त कर सकते हैं कोई क्रिया नहीं कर सकते। यदि आप किसी सरकार की किसी नीति के विरुद्ध कोई सामूहिक क्रिया करते हैं तो वह क्रिया ।

"....हमारा सुझाव है कि आदर्श स्थिति में संविधान संशोधन के लिए या तो जनमत संग्रह हो या ग्राम सभाओं की स्वीकृति आवश्यक हो ...."

अपराध मानी जानी चाहिए। नई व्यवस्था में हम उसे अपराध मानेंगे। इस तरह हमारे देश की जो बहुत बड़ी ताकत इन आंदोलनों के रोकने में लग रही है वह शक्ति बच जाएगी। हमने पश्चिम के लोकतंत्र की आंख बंद करके नकल की इसलिए हम लोगों ने हड़ताल चक्का जाम आदि समाज विरोधी कार्यों को छूट दे दी। वास्तव में यह सब समाज विरोधी कार्य हैं इसलिए मेरा आप सबसे निवेदन है कि आप किसी भी परिस्थिति में हड़ताल चक्का जाम अनशन आंदोलन इनका समर्थन न करें

सुरक्षा कर सभी गैर सरकारी संपत्ति पर होना चाहिए :-

4 फरवरी प्रातः कालीन सत्र नई समाज व्यवस्था पर चर्चा। हमने आपको पहले बताया था कि नई समाज व्यवस्था में सिर्फ सुरक्षा कर ही एकमात्र टैक्स होगा बाकी सारे टैक्स समाप्त कर दिए जाएंगे। यह सुरक्षा कर सभी गैर सरकारी संपत्तियों पर होगा चाहे वह मंदिर हो मस्जिद हो धर्मशाला हो गुरुद्वारा हो या श्मशान हो या कोई भी और हो। जो भी संस्थान या परिवार उस संपत्ति के स्वामित्व का दावा करेगा वह उस संपत्ति के बाजार मूल्य के अनुसार दो प्रतिशत वार्षिक टैक्स देगा। इस तरह किसी भी व्यक्ति को सुरक्षा कर से कोई छूट नहीं दी जाएगी। यदि कोई टैक्स देने की स्थिति में नहीं है तो वह अपनी संपत्ति की पूरी व्यवस्था सरकार के हाथ में दे सकता है या अपनी संपत्ति बेच सकता है। मैं समझता हूं कि इस प्रकार की व्यवस्था से संपत्ति रखने की होड़ समाप्त हो जाएगी। लोग जरूर से ज्यादा संपत्ति इकट्ठा करना ठीक नहीं समझेंगे दूसरी बात यह होगी कि संपत्ति हमेशा उपयोग में आएगी अनुपयोगी संपत्ति रखना घाटे का सौदा बन जाएगा। अन्य सभी प्रकार के टैक्स चाहे हुए इनकम टैक्स या जीएसटी हो अन्य किसी प्रकार का टैक्स हो सभी प्रकार के टैक्स समाप्त हो जाएंगे मेरे विचार से सुरक्षा कर ही एकमात्र समाधान है और मंदिर मस्जिद गुरुद्वारा श्मशान धर्मशाला आदि को भी इस सुरक्षा कर के दायरे में रखना उचित होगा।

कैसी हो नयी समाज व्यवस्था की अर्थव्यवस्था :-

हम आप पिछले 10 दिनों से इस बात पर लगातार चर्चा कर रहे हैं कि नई समाज व्यवस्था कैसी होगी। हम न सिर्फ वर्तमान व्यवस्था की कमजोरी बताते हैं, न सिर्फ उन कमजोरियों के कारण बताते हैं, बल्कि हम उसका विकल्प भी प्रस्तुत करते हैं। प्रतिदिन प्रातःकाल हम इसी तरह की वैकल्पिक समाज व्यवस्था पर चर्चा कर रहे हैं। इसी कड़ी में कल प्रातःकाल हम इस बात पर चर्चा करेंगे कि दुनिया की अर्थव्यवस्था में जो विकृतियां आई हैं, उन सब का समाधान क्या हो सकता है और इस समाधान में भारत किस तरह पहल कर सकता है। यह विषय लंबा होने के कारण हम कल प्रातः दोपहर और शाम तीनों सत्र में इसी विषय पर चर्चा करेंगे। विषय सिर्फ एक होगा: दुनिया की अर्थव्यवस्था में आई विकृतियों का समाधान।

5 फरवरी प्रातःकालीन सत्र नई समाज व्यवस्था पर चर्चा। आज हम दिनभर 3 सत्रों में इस बात की चर्चा करेंगे कि दुनिया में आर्थिक समस्याएं क्या हैं, इनका कारण क्या है और इनका समाधान क्या है। वैसे तो दुनिया भर में आर्थिक समस्याओं की लिस्ट लंबी है, लेकिन उन समस्याओं में से यदि हम प्रमुख समस्याओं का आकलन करें, तो उनमें मुद्रा स्थिति, आर्थिक असमानता, श्रम शोषण, बेरोजगारी, बढ़ता पर्यावरण प्रदूषण, शहरी आबादी की वृद्धि, विदेशी कर्ज, उद्योग धंधों का केंद्रीकरण। यह सभी समस्याएं पूरी दुनिया में लंबे समय से लगातार बढ़ रही हैं, लेकिन हम भारत से शुरुआत करेंगे। यह सभी समस्याएं भारत में भी स्वतंत्रता के बाद लगातार बढ़ती गई हैं। मुद्रा स्फीति को ही महंगाई कहा जा रहा है। गरीब और अमीर के बीच दूरी लगातार बढ़ती जा रही है। श्रम और बुद्धि के बीच भी दूरी बढ़ रही है। श्रम का मूल्य और श्रम का सम्मान बुद्धि की तुलना में बहुत धीरे-धीरे बढ़ रहा है। बेरोजगारी की गलत परिभाषा के कारण श्रम लगातार बेरोजगार होता जा रहा है। पर्यावरण लगातार बिगड़ रहा है। शहरी आबादी की तरफ गांव के लोग लगातार पलायन कर रहे हैं। भारत पर विदेशी कर्ज भी बढ़ रहा है। हमारे बजट का पांचवा हिस्सा हम सिर्फ ब्याज पर खर्च कर रहे हैं। लघु उद्योग पूरे भारत में लगातार बंद होते जा रहे हैं। इस तरह हम महसूस करते हैं कि पूरे देश में लगातार आर्थिक समस्याएं बढ़ती ही जा रही हैं। निम्न वर्ग, मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग के बीच दूरी बढ़ रही है। श्रम, बुद्धि और धन इन तीनों के बीच दूरी बढ़ रही है। इस दूरी का बढ़ना बहुत घातक है। इसलिए हमें इस समस्या का कोई न कोई समाधान खोजना भी होगा और करना भी होगा। दोपहर की चर्चा में हम इस बात पर विचार करेंगे कि ये समस्याएं बढ़ क्यों रही हैं।

मैंने प्रातःकालीन सत्र में कुल आठ गंभीर आर्थिक समस्याओं पर चर्चा की थी इस पर लगभग सर्वसम्मति है। यह समस्याएं पूरी दुनिया सहित भारत में भी तेजी से बढ़ रही हैं। लेकिन ... इसका मूल कारण क्या है, मैंने इस संबंध में 70 वर्षों तक लगातार रिसर्च किया और मैंने यह पाया कि ऊर्जा के दो स्रोत होते हैं: प्राकृतिक ऊर्जा और कृत्रिम ऊर्जा। प्राकृतिक ऊर्जा में मनुष्य और पशु आते हैं, जबकि कृत्रिम ऊर्जा में डीजल, पेट्रोल, बिजली, केरोसिन, कोयला और गैस शामिल हैं। वास्तविक स्थिति में कृत्रिम ऊर्जा को श्रम ऊर्जा का सहायक होना चाहिए था, अर्थात जिस कार्य के लिए श्रम ऊर्जा उपलब्ध न हो या संभव न हो, उस विशेष परिस्थिति में कृत्रिम ऊर्जा को सहायक ऊर्जा के रूप में प्रयोग होना चाहिए था। लेकिन गलती से हमने कृत्रिम ऊर्जा को प्रमुख मान लिया और श्रम को सहायक। यदि प्राकृतिक ऊर्जा कृत्रिम ऊर्जा के साथ प्रतिस्पर्धा भी करती, तब भी इतनी समस्या पैदा नहीं होती, लेकिन दुर्भाग्य से हमारे नीति बनाने वालों ने प्राकृतिक ऊर्जा को कृत्रिम ऊर्जा के साथ प्रतिस्पर्धा की दौड़ से भी बाहर कर दिया। प्राकृतिक ऊर्जा की तुलना में कृत्रिम ऊर्जा को सस्ता करते चले गए। इसका परिणाम हुआ कि श्रम और पशु बेरोजगार होते चले गए, अनुपयोगी होते चले गए और हम लगातार कृत्रिम ऊर्जा पर निर्भर होते चले गए। कृत्रिम ऊर्जा श्रम की सुविधा के लिए बनी थी, अतिरिक्त उत्पादन के लिए बनी थी, न कि श्रम के विकल्प के रूप में, लेकिन दुनिया ने पूंजीपतियों और बुद्धिजीवियों के प्रभाव में आकर कृत्रिम ऊर्जा को ही प्रमुख स्रोत मान लिया। इस गलती के परिणाम स्वरूप सबसे अधिक पर्यावरण पर प्रभाव पड़ा, एक प्राकृतिक असंतुलन पैदा हुआ। इस असंतुलन को दूर करने के लिए हमने तरह-तरह के नाटक किए, लेकिन वह असंतुलन दूर नहीं हो सका। मेरे विचार से यह सबसे बड़ी भूल हुई है कि हमने कृत्रिम ऊर्जा को सहायक ऊर्जा न मानकर मूल ऊर्जा स्रोत बना दिया। यदि आप गंभीरता से सोचेंगे, तो वर्तमान समय में सभी समस्याओं का कारण सिर्फ एक यह भूल है कि हमारे देश के पूंजीपतियों और बुद्धिजीवियों ने कृत्रिम ऊर्जा की सुविधाओं को मूल आवश्यकता मान लिया और श्रम तथा पशु इन दोनों की चिंता पूरी तरह छोड़ दी। दुनिया की सभी आर्थिक समस्याओं का मुख्य कारण सिर्फ यही एकमात्र भूल है, और जब तक इस भूल में सुधार नहीं होगा, तब तक किसी आर्थिक समस्या का समाधान संभव ही नहीं है।

हम अपनी चर्चा में इस नतीजे तक पहुंच चुके हैं कि हमें दुनिया की अर्थव्यवस्था को ठीक करने के लिए कृत्रिम ऊर्जा की खपत कम करनी ही पड़ेगी। इसके अतिरिक्त और कोई समाधान नहीं है। कृत्रिम ऊर्जा की खपत कम करने के लिए हमें एक तरफ तो तकनीक का अधिक उपयोग करना होगा, क्योंकि तकनीक कृत्रिम ऊर्जा की खपत को कम करती है, दूसरी ओर हमें कृत्रिम ऊर्जा का मूल्य भी बहुत बढ़ाना होगा, क्योंकि इसके अतिरिक्त कृत्रिम ऊर्जा की खपत कम करने का कोई और मार्ग उपलब्ध नहीं है। यदि किसी के पास कोई अन्य मार्ग उपलब्ध हो, तो वह बता सकता है। मेरे विचार से तो सिर्फ यही दो मार्ग हैं। मैं जानता हूं कि कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि का हमारे पूंजीपति और बुद्धिजीवी खुला विरोध करेंगे, क्योंकि जिन लोगों को कृत्रिम ऊर्जा से सुविधा और सुख प्राप्त हो चुका है, वह अब इस पर किसी तरह का नियंत्रण उचित नहीं समझेंगे, लेकिन मेरे विचार से इसके अतिरिक्त कोई और समाधान भी नहीं है। जो मैंने आठ समस्याएं बताई हैं, उन आठों समस्याओं का एक मुफ्त समाधान यही है कि किसी तरह कृत्रिम ऊर्जा की खपत को कम किया जाए। वर्तमान समय में भारत इसकी शुरुआत कर सकता है। भारत में एक मजबूत सरकार है और भारत की तरफ पूरी दुनिया देख रही है। यदि भारत इस दिशा में पहला कदम उठाता है, तो दुनिया इस पर गंभीरता से सोच सकती है। मैं जानता हूं कि इस प्रस्ताव के आधार पर एक बहुत बड़ा प्रश्न यह उठेगा कि क्या भारत की विकास दर नहीं गिर जाएगी। मुझे ऐसा लगता है कि विकास दर गिरेगी नहीं, और यदि एक वर्ष में विकास दर गिरती भी है, तो इन आठ समस्याओं के समाधान की तुलना में विकास दर कोई महत्व नहीं रखती है, और एक वर्ष के बाद ही हम और अधिक तेजी से विकास कर लेंगे। इसलिए एक नया प्रयोग हमें करना चाहिए। अगले लेख में हम यह विचार करेंगे कि कितनी मूल्य वृद्धि करनी पड़ेगी और उसका अर्थव्यवस्था पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

सुरक्षा और न्याय के अतिरिक्त, सभी कार्य कोई अन्य इकाई करे :-

8 फरवरी प्रातःकालीन सत्र में हम एक नई सामाजिक व्यवस्था पर चर्चा कर रहे हैं। नई सामाजिक व्यवस्था में एक केंद्रीय सभा होगी। इस केंद्रीय सभा का चुनाव नीचे से किया जाएगा, अर्थात परिवार मिलकर ग्राम सभा बनाएंगे, ग्राम सभाएं मिलकर जिला सभा बनाएंगी, जिला सभा मिलकर प्रदेश सभा बनाएंगी और प्रदेश सभाएं मिलकर केंद्र सभा बनाएंगी। केंद्र सरकार ही सारे विभागों को देखेगी, लेकिन पांच विभागों के लिए एक अलग से सरकार होगी और वह होंगे पुलिस, सेना, वित्त, विदेश और न्याय। यह जो अलग से सरकार होगी, यह सीधे आम जनता के मतदान से चुनी जाएगी। भारत का एक संविधान होगा और संविधान के लिए एक संविधान सभा होगी। संविधान सभा और केंद्र सरकार, यह दोनों संविधान के अंतर्गत कार्य करेंगे। राष्ट्रपति का चुनाव जनता के द्वारा होगा और राष्ट्रपति के अंतर्गत यह दोनों सभाएं संचालित होंगी। इस तरह केंद्र सरकार की भूमिका बहुत कम होगी। केंद्र सभा ही हर मामले में सक्षम होगी। नई सामाजिक व्यवस्था में केंद्र सरकार में लोग कम जाना चाहेंगे क्योंकि उसके पास बहुत कम विभाग होंगे। इस तरह की दो सभाओं की व्यवस्था होने से सारे झगड़े अपने आप खत्म हो जाएंगे। प्रदेशों में कोई सरकार नहीं होगी, प्रदेश सभा सब काम करेगी। सरकार के कानून बहुत ही कम हो जाएंगे और सरकारी कर्मचारियों की संख्या भी बहुत कम हो जाएगी। सरकार का हस्तक्षेप और भूमिका भी बहुत कम बचेगी।

वर्तमान न्यायिक सिद्धांत, न्याय में बाधक :-

9 फरवरी प्रातः कालीन सत्र नई सामाजिक व्यवस्था पर चर्चा। हम जो नई परिवर्तित या संशोधित व्यवस्था रख रहे हैं, उसमें न्याय बहुत शीघ्र होगा, अंतिम निर्णय 6 महीने के अंदर हो जाएगा। न्यायालय में बहुत कम मामले जाएंगे, अधिकांश मामले पंचायत से ही निपट जाएंगे। पुलिस, अपराधी, पीड़ित और पंचायत चारों यदि किसी दंड पर सहमत हो जाते हैं, तो न्यायालय में अपील करने की कोई आवश्यकता नहीं है। न्यायिक सिद्धांत बदल दिए जाएंगे, वर्तमान न्यायिक सिद्धांत न्याय में बाधक है, इनमें पश्चिम की नकल की गई है। नए सिद्धांतों के अनुसार, जो भी व्यक्ति अपील करेगा, यदि ऐसा पाया गया कि उसने जानबूझकर गलत किया है, तो उसे भारी दंड दिया जाएगा। जो व्यक्ति किसी भी अपराध में सच बता देगा, उसे दंड में रियायत दी जाएगी। न्यायपालिका में जाना आसान नहीं होगा। जो व्यक्ति पुलिस के निर्णय के खिलाफ अपील करेगा, उसे स्वयं को निर्दोष सिद्ध करना होगा, पुलिस की जिम्मेदारी नहीं होगी। इस तरह न्याय त्वरित, सुलभ और सस्ता होगा, साथ ही न्यायपालिका का दुरुपयोग करने वालों पर बहुत कड़ाई की जाएगी। जिस व्यक्ति को पुलिस अपराधी मान लेती है, वह सच को छिपा नहीं सकता। यदि वह सच छुपाता है, तो वह बड़ा अपराध मान लिया जाएगा। न्यायपालिका में वकीलों की भूमिका बहुत कम हो जाएगी। वर्तमान न्यायिक व्यवसाय में न्याय दिखना चाहिए हो या ना हो, इसको महत्व दिया गया है। हमारी व्यवस्था में न्याय होना चाहिए, दिखे या ना दिखे, इसको महत्व दिया गया है। इस तरह हम न्याय का एक नया स्वरूप आपके सामने प्रस्तुत कर रहे हैं।

व्यवस्था परिवर्तन की पांचवी कोशिश :-

10 फरवरी प्रातः कालीन सत्र नई समाज व्यवस्था पर चर्चा। हम प्रतिदिन व्यवस्था परिवर्तन की योजना पर चर्चा कर रहे हैं। स्वतंत्रता के बाद लगातार व्यवस्था परिवर्तन की कोशिशों को राजनेताओं ने धोखा दिया। पहले प्रयत्न गांधी ने किया था, लेकिन गांधी के प्रयत्न को नेहरू के नेतृत्व में राजनेताओं ने धोखा दिया। व्यवस्था परिवर्तन सत्ता परिवर्तन में बदल गया। दोबारा इंदिरा गांधी के कार्यकाल में जयप्रकाश जी ने व्यवस्था परिवर्तन की शुरुआत की, पूरी जनता ने उनके साथ दिया, लेकिन फिर नेताओं ने धोखा दिया। चरण सिंह के नेतृत्व में राजनेताओं ने व्यवस्था परिवर्तन के प्रयत्न को फेल कर दिया। तीसरी बार ठाकुरदास बंग के नेतृत्व में व्यवस्था परिवर्तन की योजना बनी, लेकिन गांधीवादियों में घुसे हुए कम्युनिस्टों ने इस योजना को शुरुआत में ही असफल कर दिया। चौथी बार अन्ना हजारे ने शुरुआत की, सारे देश की जनता ने साथ दिया, लेकिन अरविंद केजरीवाल के नेतृत्व में राजनेताओं ने धोखा दिया और व्यवस्था परिवर्तन फेल हो गया । अब पांचवीं बार हम सब लोग मिलकर व्यवस्था परिवर्तन की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। हम राजनेताओं के नेतृत्व में नहीं, बल्कि राजनेताओं के साथ मिलकर आगे बढ़ रहे हैं। हम सब लोग व्यवस्था परिवर्तन की इस लड़ाई में पूरे सावधान हैं कि राजनेता धोखा न दे सकें। इस नई व्यवस्था परिवर्तन की लड़ाई में संघ परिवार, गायत्री परिवार, आर्य समाज और मां संस्थान मिलकर लगातार कार्य कर रहे हैं। हमारा उद्देश्य सत्ता परिवर्तन नहीं है, व्यवस्था परिवर्तन है। हम नरेंद्र मोदी को पूरी स्वतंत्रता नहीं दे रहे हैं, बल्कि हम लोगों की इच्छा है कि नरेंद्र मोदी व्यवस्था परिवर्तन करने वाली संस्थाओं के साथ मिलकर ही सत्ता का उपयोग करें। स्पष्ट है कि नरेंद्र मोदी को व्यवस्था परिवर्तन की दिशा में ही बढ़ना होगा। हमें सत्ता परिवर्तन नहीं, व्यवस्था परिवर्तन चाहिए। अरविंद केजरीवाल ने हम लोगों को धोखा देकर जिस तरह सत्ता की तरफ कदम बढ़ाया, उसके दुष्परिणाम दिखना शुरू हो गए हैं। यदि अरविंद केजरीवाल भी भविष्य में राजनीति करना चाहते हैं, तो उन्हें सत्ता का मोह छोड़कर व्यवस्था परिवर्तन की लड़ाई में फिर से आगे आना चाहिए। उन्हें अब कम्युनिस्ट और सांप्रदायिक मुसलमान का मोह छोड़ना ही होगा। अब उन्हें शीश महल और सत्ता से दूरी बनानी ही होगी, अन्यथा उनकी राजनीतिक हत्या निश्चित है। राजनीतिक सत्ता एक भालू है जो कंबल दिखती है और व्यवस्था परिवर्तन एक कंबल है जो भालू के जैसा दिखता है।

किसी भी नागरिक संहिता में सरकार का हस्तक्षेप ना हो :-

12 फरवरी प्रातः कालीन सत्र में नई सामाजिक व्यवस्था पर चर्चा। हम समान नागरिक संहिता की लगातार बात कर रहे हैं। उत्तराखंड सरकार ने समान नागरिक संहिता लागू भी कर दी है, लेकिन हम लोगों के आदर्श समाज व्यवस्था में समान नागरिक संहिता का मतलब वह नहीं है जैसा समझा जा रहा है। आदर्श स्थिति में हम किसी भी प्रकार की नागरिक संहिता के पक्ष में नहीं हैं। व्यक्ति, परिवार, गांव या राष्ट्र अपनी-अपनी नागरिक संहिताएं बना सकता है, उनका पालन भी करा सकता है, लेकिन सरकार को कोई नागरिक संहिता नहीं बनानी चाहिए। इसका मतलब स्पष्ट है कि किसी भी नागरिक संहिता में सरकार का कोई हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। फिर भी हम समान नागरिक संहिता की मांग कर रहे हैं, इसका अर्थ यह है कि सन 47 में स्वतंत्रता के बाद जो नागरिक संहिता बनाई गई, वह असमान संहिता बनाई गई। या तो उस संहिता को पूरी तरह समाप्त कर दिया जाए, अन्यथा उसकी असमानताओं को दूर कर दिया जाए। इसका आशय है कि नागरिक संहिता समान होनी चाहिए, इसका आशय यह नहीं है कि समान नागरिक संहिता होनी चाहिए। यदि कोई नागरिक संहिता बनी हुई है या बनाई जा रही है, तो उसे सभी व्यक्तियों पर समान रूप से लागू होना चाहिए। यही समान नागरिक संहिता का अर्थ है। उत्तराखंड सरकार में जो संहिता बनाई है , वह ठीक है। उसका अर्थ यही है कि जो वर्तमान संहिता बनी हुई है, उस संहिता की असमानताओं को दूर कर दिया गया। उसमें हिंदू-मुसलमान का भेद खत्म कर दिया गया, इसमें कुछ भी गलत नहीं है। लेकिन यदि इस तरह की नागरिक संहिताओं को समाप्त कर दिया जाए, तो और भी अच्छा होगा। यही हमारे आदर्श समाज व्यवस्था का मानना है। स्पष्ट है कि आदर्श समाज व्यवस्था में कोई नागरिक संहिता सरकार लागू नहीं करेगी।

केंद्र सभा अप्रत्यक्ष रूप से समाज का प्रतिनिधित्व करेगी :-

13 फरवरी प्रातःकालीन सत्र सामाजिक विषय पर चर्चा। नई समाज व्यवस्था में सरकार की पूरी भूमिका केंद्र सभा के पास होगी, सरकार के पास नहीं। सबसे महत्वपूर्ण केंद्र सभा होगी, सरकार के पास सिर्फ पांच विभाग ही रहेंगे: सेना, पुलिस, वित्त, विदेश और न्याय। अन्य किसी भी कार्य में सरकार का कोई दखल नहीं होगा, अन्य सारे कार्य केंद्र सभा करेगी। केंद्र सभा का गठन नीचे से क्रमशः होगा, अर्थात परिवार सभाएं ग्राम सभा बनाएंगी, ग्राम सभाएं जिला सभा, जिला सभाएं प्रदेश सभा और प्रदेश सभाएं, केंद्र सभा। इस तरह केंद्र सभा की ही भूमिका सर्वोच्च मानी जाएगी। केंद्र सभा अप्रत्यक्ष रूप से समाज का प्रतिनिधित्व करेगी और सरकार सिर्फ व्यक्ति के मौलिक अधिकारों के सुरक्षा की गारंटी देगी। इस तरह राजनीतिक उठा-पटक और राजनीतिक गुलामी से देश मुक्त हो जाएगा। इस नई सामाजिक व्यवस्था की दिशा में हम सब लोग लगातार प्रयत्नशील हैं। केंद्र सरकार का गठन इस तरह होगा, जिस तरह अभी होता है, अर्थात भारत का हर नागरिक मतदान करेगा और उस मतदान द्वारा केंद्र सरकार बनेगी।

विधायिका का कार्यपालिका का नियंत्रक होना ठीक नहीं :

14 फरवरी प्रातःकालीन सत्र सामाजिक विषय पर चर्चा। हम लोग जो नई संवैधानिक व्यवस्था बना रहे हैं, इस व्यवस्था में कार्यपालिका और विधायिका दोनों बिल्कुल अलग-अलग होंगे। विधायिका का कार्यपालिका में कोई हस्तक्षेप नहीं होगा। कोई भी सांसद या विधायक कार्यपालिका में न जा सकेगा, न हस्तक्षेप कर सकेगा, न नियंत्रण कर सकेगा। यदि कोई सांसद या विधायक मंत्री बनना चाहेगा, तो उसे अपनी सदस्यता से त्यागपत्र देना होगा। इस तरह कार्यपालिका पूरी तरह स्वतंत्र होगी। विधायिका जो विभिन्न कानून बनाएगी, कार्यपालिका उन कानून का पालन करेगी, विधायिका के किसी व्यक्ति के आदेश का नहीं। प्रधानमंत्री या तो जनता के द्वारा चुना जाएगा, अथवा विधायिका के लोग चुनेंगे, लेकिन प्रधानमंत्री जो चुना जाएगा, वह बाहर का व्यक्ति हो सकता है। राष्ट्रपति का चुनाव जनता के द्वारा किया जाएगा। इस तरह विधायिका और कार्यपालिका को बिल्कुल अलग-अलग कर देने से अनेक समस्याएं समाप्त हो सकती हैं। यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि विधायिका और कार्यपालिका को एक साथ जोड़ देने से बहुत समस्याएं पैदा हुईं। सत्ता का केंद्रीयकरण होता चला गया। इस सत्ता के केंद्रीयकरण को विकेंद्रित करना आवश्यक है।

5

विशेष लेख

बढ़ती बेरोजगारी: कितनी सच्चाई, कितना भ्रम

...न्यायपूर्ण तरीके से बेरोजगारी दूर करने का एकमात्र माध्यम है, श्रम की मांग बढ़े,...

दुनिया भर में बेरोजगारी दूर करना सरकार की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी मानी जाती है, लेकिन दुनिया भर में बेरोजगारी की कोई सही परिभाषा नहीं बन सकी है। जब बेरोजगारी की परिभाषा ही गलत है और उसकी पहचान या आंकड़े ही विवादस्पद हैं, तो कोई सरकार बेरोजगारी या तो दूर नहीं कर सकती अथवा बेरोजगारी के नाम पर अन्य चालाक लोग इस शब्द का दुरुपयोग करते हैं। वर्तमान दुनिया में भी यही हो रहा है और भारत भी इससे अलग नहीं है। वर्तमान भारत में बेरोजगारी की जो परिभाषा सुनी जाती है, वह तो पूरी की पूरी एक षड्यंत्र के अंतर्गत बनाई गई है। भारत की कुल 142 करोड़ की आबादी में 40 प्रतिशत लोग ऐसे हैं जो 80 प्रतिशत तक शारीरिक श्रम पर ही जीवित रहते हैं। उनके जीवन यापन में बौद्धिक योग्यता की भूमिका बहुत कम होती है। 30-40 प्रतिशत ऐसी भी आबादी है जिसके जीवन यापन में 80 प्रतिशत भूमिका शिक्षा और बौद्धिक योग्यता की होती है। उनके पास श्रम पूरा रहता है, लेकिन श्रम का उपयोग 10-20 प्रतिशत ही होता है। 25-30 प्रतिशत ऐसे भी लोग मिलते हैं जिनके जीवन यापन में धन संपत्ति का योगदान 50 प्रतिशत और बौद्धिक योग्यता का योगदान भी 30-40 प्रतिशत होता है। ऐसे लोग आमतौर पर व्यायाम के लिए ही शारीरिक श्रम करते हैं। स्पष्ट है कि जो व्यक्ति सिर्फ शारीरिक श्रम पर ही जिंदा है और उस श्रम से प्राप्त आय की भी अधिकतम सीमा बनी हुई है, वही व्यक्ति बेरोजगार माना जा सकता है। कोई भी शिक्षित बुद्धिजीवी या धन संपत्ति वाला व्यक्ति अपने को बेरोजगार नहीं कह सकता, क्योंकि उसके पास श्रम भी उपलब्ध है। दुर्भाग्य से बुद्धिजीवियों ने षड्यंत्रपूर्वक बेरोजगारी की एक गलत परिभाषा दुनिया में बना दी है और भारत सरकार भी उसी परिभाषा का अंधा अनुकरण कर रही है।

व्यक्ति को योग्यता अनुसार रोजगार प्राप्त कराना राज्य का स्वैच्छिक कर्तव्य होता है, दायित्व नहीं। क्योंकि रोजगार की स्वतंत्रता तो व्यक्ति का मौलिक अधिकार होता है, किंतु रोजगार प्राप्त कराना व्यक्ति का मात्र संवैधानिक अधिकार होता है, मौलिक अधिकार नहीं। वर्तमान भारत में हमारे नासमझ समाज विशेषज्ञ रोजगार को मौलिक अधिकार मान लेते हैं और ऐसे ही बुद्धिजीवी न्यायपालिका में बैठकर इस परिभाषा से सहमति व्यक्त कर देते हैं। इस सच्चाई के बाद भी रोजगार देना राज्य की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी मानी जाती है, क्योंकि मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के अभाव में व्यक्ति कभी-कभी अपराध करने के लिए मजबूर हो जाता है। ऐसे अपराध समाज में समस्याएं पैदा करते हैं। इसलिए राज्य का महत्वपूर्ण कार्य है कि वह अभावग्रस्त लोगों की मजबूरी को दूर करे। ऐसे मजबूर लोगों को ... यदि मुफ्त में बांटकर उनकी सहायता की जाएगी, तो इस सहायता से एक नई समस्या पैदा हो सकती है। इसलिए राज्य के लिए यह उचित माना जाता है कि अभावग्रस्त लोग मजबूरी में बेरोजगार न रहें।

पिछले कई सौ वर्षों से भारत में भी समाज व्यवस्था से लेकर राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था पर बुद्धिजीवियों का एकाधिकार रहा है। इस एकाधिकार में समय-समय पर पूंजीपतियों की भी भूमिका शामिल हो जाती है। इन दोनों ने मिलकर ही बेरोजगारी की परिभाषा बदल दी। कहा जाता है कि योग्यता अनुसार कार्य का अभाव बेरोजगारी है। प्रश्न उठता है कि एक श्रमिक भूख, मजबूरी में 100 रुपए में कहीं दिन भर काम कर रहा है और एक इंजीनियर 500 रुपये प्रति दिन में भी काम न करके बेरोजगार बैठा है, क्योंकि 500 रुपये प्रतिदिन उसकी योग्यता की तुलना में बहुत कम है। सच्चाई तो यह है कि एक सीमा से नीचे श्रम मूल्य पर काम करने वाले मजबूर श्रमिक को बेरोजगार माना जाए तथा उससे ऊपर प्राप्त करने की प्रतीक्षा में बेरोजगार बैठे इंजीनियर को बेरोजगार न मानकर उचित रोजगार की प्रतीक्षा में माना जाए, किंतु बुद्धिजीवियों ने धूर्ततापूर्वक रोजगार की ऐसी परिभाषा बना दी कि मजबूरी में काम कर रहे को रोजगार प्राप्त तथा उचित रोजगार की प्रतीक्षा में बैठे को बेरोजगार घोषित कर दिया। बेरोजगारी की वर्तमान भ्रमपूर्ण परिभाषा को बदलने की जरूरत है। किसी स्थापित व्यवस्था द्वारा घोषित न्यूनतम श्रम मूल्य पर योग्यतानुसार कार्य का अभाव ही बेरोजगारी की ठीक परिभाषा हो सकती है, किंतु मैं जानता हूं कि इस परिभाषा को न बुद्धिजीवी स्वीकार करेंगे, न ही सरकार।

इस तरह यह बात पूरी तरह स्पष्ट हो चुकी है कि बेरोजगारी की प्रचलित परिभाषा भी गलत है और आंकड़े भी गलत हैं, और इसी गलत परिभाषा और आंकड़ों को माध्यम बनाकर हमारे राजनेताओं ने बेरोजगारी दूर करने के नाम से चार सिद्धांत बनाए हैं – 1. कृत्रिम ऊर्जा मूल्य नियंत्रण, 2. शिक्षित बेरोजगारी को मान्यता, 3. श्रम मूल्य वृद्धि की सरकारी घोषणाएं, 4. जाति आरक्षण। स्पष्ट है कि भारत की बुद्धि प्रधान अर्थव्यवस्था श्रम शोषण के लिए चारों सिद्धांतों पर पूरी ईमानदारी से अमल करती है। न्यायपूर्ण तरीके से बेरोजगारी दूर करने का एकमात्र माध्यम है, श्रम की मांग बढ़े, किंतु हमारे देश के आर्थिक विशेषज्ञ सारी शक्ति लगाकर श्रम की मांग बढ़ने से रोकने का प्रयत्न करते रहते हैं। 70 वर्ष की स्वतंत्रता के बाद भारत दुनिया के देशों से आर्थिक प्रतिस्पर्धा की चुनौती दे रहा है, तो दूसरी ओर भारत में आज भी बेरोजगारों की संख्या करीब 15 प्रतिशत है, जो 250 रुपये प्रतिदिन से कम पर अपना गुजारा करने के लिए मजबूर है। आज भी भारत सरकार ने पांच व्यक्ति को परिवार मानकर 250 रुपये प्रतिदिन का न्यूनतम श्रम मूल्य घोषित किया है, किंतु इस श्रम मूल्य पर भी सरकार सबको रोजगार की गारंटी नहीं दे पा रही है । मुझे जानकारी है कि सरकारी बेरोजगारों की सूची में ऐसे वास्तविक बेरोजगारों का नाम शामिल नहीं है, दूसरी ओर इस सूची में उन सब लोगों का नाम शामिल है जो उचित रोजगार की प्रतीक्षा में काम करने के अभाव में घर बैठे हैं।

यह बात साफ हो गई है कि श्रम का मूल्य और मांग का बढ़ना ही बेरोजगारी दूर करने का एकमात्र आधार है। बेरोजगारी का आकलन कोई निरपेक्ष शब्द नहीं है, बल्कि सापेक्ष शब्द है। इसलिए सामाजिक या सरकारी मान्यता ही बेरोजगारी आकलन का मुख्य आधार बन सकती है। वर्तमान भारत में नरेगा के अंतर्गत हमारी भारत सरकार ने 250 रुपये प्रतिदिन प्रति व्यक्ति श्रम की मजदूरी तय की है। इसके अनुसार जो व्यक्ति 250 रुपए से भी कम पर योग्यतानुसार काम करने के लिए मजबूर है, उसे ही बेरोजगार माना जा सकता है, किसी अन्य को नहीं। ऐसे व्यक्ति को या तो योग्यतानुसार काम दिया जा सकता है या उसकी आर्थिक सहायता की जा सकती है। इसके अतिरिक्त किसी भी अन्य व्यक्ति को किसी भी प्रकार की अन्य सहायता नहीं की जा सकती। बुद्धिजीवियों के षड्यंत्र को भी पूरी तरह बंद करना होगा। कृत्रिम ऊर्जा का मूल्य बढ़ाना होगा। शिक्षित बेरोजगार तब तक किसी सहायता का पात्र नहीं है, जब तक वह न्यूनतम घोषित श्रम मूल्य पर काम करने को तैयार न हो। सरकार के द्वारा श्रम का मूल्य किसी भी प्रकार से बढ़ाना तब तक अनुचित है, जब तक आप उस घोषित मूल्य पर पूरा रोजगार देने की गारंटी न दे दें। किसी भी प्रकार के आरक्षण को श्रम शोषण का सिद्धांत मान लिया जाना चाहिए। इसके साथ-साथ यह भी संभव है कि यदि कृत्रिम ऊर्जा का मूल्य बहुत बढ़ा दिया जाए और इसके परिणाम स्वरुप श्रम मूल्य अपने आप बढ़ जाए, तब न्यूनतम श्रम मूल्य को 250 रुपए से बढ़ाकर 500 रुपए भी किया जा सकता है। बेरोजगारी का नाटक करके श्रम शोषण के नए-नए तरीके खोजना यह सरकार और बुद्धिजीवियों के लिए अनैतिक भी है और घातक भी। मैं मानता हूं कि प्रचार माध्यमों को आधार बनाकर बुद्धिजीवियों ने श्रमजीवियों में एक भ्रम बना दिया और श्रमजीवियों में यह भ्रम दूर करना वर्ग संघर्ष का आधार बन सकता है। इसलिए मैं इस लेख के माध्यम से श्रमजीवियों में ऐसी कोई जागृति पैदा करने का पक्षधर नहीं हूं जो बुद्धिजीवियों और पूंजीपतियों के खिलाफ श्रमिकों के संघर्ष के रूप में खड़ी हो जाए। लेकिन मैं यह जरूर चाहता हूं कि बुद्धिजीवियों में जो लोग सामाजिक न्याय के पक्षधर हैं, उन लोगों को इस संबंध में अवश्य जागृत होना चाहिए। श्रम और बुद्धि के बीच बढ़ते जा रहे अंतर को कम करना न्याय संगत है और हम सबका कर्तव्य है कि हम इस संबंध में मिल-जुलकर योजना बनाएं।

बजरंग मुनि

विविध विषयों पर मुनि जी के लेख

समाज बालिग-नाबालिक की उम्र तय करें न कि सरकार :-

15 फरवरी प्रातःकालीन सत्र सामाजिक विषय पर चर्चा। हम भारत में संवैधानिक तरीके से 12 वर्ष की उम्र से कम के बालक को ही नाबालिक मानेंगे। 12 वर्ष से अधिक होते ही वह सरकार की नजर में बालिग मान लिया जाएगा। परिवार, गांव या राष्ट्र सभाएं अलग से नियम बना सकती हैं, ये सामाजिक संस्थाएं विवाह की उम्र तय कर सकती हैं, बालिग-नाबालिक की उम्र तय कर सकती हैं, लेकिन सरकार उसमें कोई दखल नहीं दे सकती। सामाजिक नियम सामाजिक तरीके से बनेंगे। हम वर्तमान में 18 वर्ष की उम्र को बालिग होने का प्रमाण नहीं मान सकते, इसलिए मैंने नई व्यवस्था के प्रारूप में यह शामिल किया है कि सरकार की नजर में 12 वर्ष से अधिक उम्र का बालक बालिग मान लिया जाएगा।

संस्थागत समाचार 'लोकस्वराज की तैयारी' :-

दोपहर के सत्र में हम इस बात की चर्चा करेंगे कि हम नई सामाजिक व्यवस्था के मामले में किस प्रकार सक्रिय हैं। मां संस्थान इस संबंध में दो अलग-अलग दिशाओं से कार्य कर रहा है। एक दिशा है लोक स्वराज। इस संस्था का कार्यालय दिल्ली कौशांबी में है। इस कार्यालय का प्रभार नरेंद्र सिंह जी देख रहे हैं। यह कार्यालय देश भर में इस बात के लिए जन जागरण करेगा कि देशभर की ग्राम सभाओं और नगर वार्ड को वह 29 अधिकार प्रदान किए जाएं, जो संविधान ने उनके लिए स्वीकृत किए हैं। साथ ही इन ग्राम सभाओं को संविधान संशोधन में भी महत्वपूर्ण भूमिका दी जाए। हम इस लोक स्वराज अभियान के माध्यम से सरकार से यह मांग करेंगे। हम ग्राम सभाओं से इस प्रकार के प्रस्ताव पारित कराएंगे। दूसरी दिशा में हम आदर्श समाज के लिए निरंतर चर्चा करते रहेंगे। इस संस्था का मुख्य कार्यालय रामानुजगंज में है और इसके प्रमुख मोहन गुप्ता जी हैं, जो ज्ञानेंद्र आर्य जी के साथ मिलकर इस कार्य को आगे बढ़ा रहे हैं। यह संस्था लगातार नई सामाजिक व्यवस्था पर चर्चा कर रही है और हम लोग सरकार से यह निवेदन कर रहे हैं कि वह परिवारों को संवैधानिक मान्यता दें। मैं यह बात स्पष्ट कर दूं कि हम लोक स्वराज की सरकार से मांग कर रहे हैं और परिवारों को संवैधानिक अधिकार देने का निवेदन कर रहे हैं। हमारी कोई मांग नहीं है। इस तरह हम लोग दो अलग-अलग दिशाओं में एक साथ मिलकर कार्य कर रहे हैं। यही हम लोगों का व्यवस्था परिवर्तन का प्रारूप है।

आंदोलनकारी किसान पेशेवर लोग, किसान तो नहीं ही हैं :-

भारत में बहुत कम ऐसे परिवार बचे हैं जो सिर्फ खेती करते हैं। अधिकांश परिवारों के कोई सदस्य नौकरी करते हैं, कोई व्यापार करते हैं, कोई मजदूरी करते हैं और कोई खेती भी करते हैं। कई लोग ऐसे भी हैं जो कुछ समय तक खेती करते हैं और कुछ समय तक दूसरे धंधे करते हैं। इसलिए किसान शब्द पूरी तरह महत्वहीन हो गया है। जो अपने को किसान कहते हैं, वे पूरी तरह गलत हैं क्योंकि देश में न कोई किसान है, न कोई मजदूर है, न व्यापारी है, न सरकारी नौकरी में है। सभी परिवार मिले-जुले कार्य करते हैं। यह अलग बात है कि पेशेवर लोग समय-समय पर अपने को व्यापारी भी कह देते हैं, किसान के साथ भी जुड़ जाते हैं, सरकारी कर्मचारियों के साथ भी जुड़ जाते हैं। खेती घाटे का धंधा है, यह कहना पूरी तरह गलत है क्योंकि जिस तरह छोटे किसान घाटे में हैं, इस तरह छोटे व्यापारी भी घाटे में हैं, इस तरह छोटे मजदूर भी नुकसान में हैं। जो भी लोग तकनीक का उपयोग नहीं कर रहे हैं, वे सब के सब नुकसान में हैं, इसलिए खेती में नुकसान हो रहा है, यह गलत है। यदि खेती में नुकसान होता, तो देश में तेजी से उत्पादन बढ़ रहा है, यह कैसे संभव होता। यह सही है कि आत्महत्या करने वालों में किसानों की संख्या ज्यादा है, मजदूर की नहीं, क्योंकि जो अपने को किसान समझते हैं, वे दूसरे धंधे करना नहीं चाहते, मजदूरी नहीं करना चाहते। इस घमंड के कारण किसानों की आत्महत्या हो रही है, अन्यथा किसान आत्महत्या कर रहा है, यह पूरी तरह गलत है। जब एक व्यक्ति की एक दिन की मजदूरी 12 से 16 किलो अनाज तक है, तब कोई किसान आत्महत्या कैसे कर सकता है। किसानों के नाम पर जो पेशेवर लोग आंदोलन कर रहे हैं, उन सब की पोल खुल चुकी है। डल्लेवाल जिसने कितना नाटक किया, 20 दिन पहले तो ऐसा प्रचारित किया था कि बस मैं तो एक-दो दिन में मरने वाला हूं। न्यायपालिका ने भी कुछ ऐसा ही गंदा वातावरण बना दिया था, लेकिन वह कभी नहीं मरेगा क्योंकि नाटकबाज कभी मरता नहीं है। आंदोलनकारी किसान पेशेवर लोग हैं, इन्हें समाधान की कोई जरूरत नहीं है, यह सारे देश को लूट लेना चाहते हैं। यह किसानों का नाम बदनाम कर रहे हैं। इस प्रकार के लोगों का बहिष्कार करने की जरूरत है।

व्यापारी मिडिया को विशेषाधिकार देना ठीक नहीं :-

कुंभ मेले में भगदड़ मची, उसके कुछ घंटे के बाद एक और घटना घटी, जिसके अनुसार एक पत्रकार पुलिस अफसर से बार-बार पूछ रहा था कि घटना में कितने मरे, इसका विवरण क्या है। पुलिस वाला कुछ छुपाना चाहता था या कारण चाहे जो भी रहा हो, पुलिस वालों ने मिलकर उस पत्रकार की पिटाई कर दी। अब यह प्रश्न खड़ा होता है कि पत्रकार गलत था या पुलिस वाले गलत थे। हो सकता है उस समय पुलिस वाले कुछ छिपा रहे हों, हो सकता है उस समय पुलिस व्यवस्था को प्राथमिकता दे रही हो। मैंने पत्रकारिता के बारे में बहुत गंभीरता से अनुभव किया है। हमारे देश के सभी बड़े राजनेता राहुल गांधी, अरविंद केजरीवाल, अखिलेश यादव सभी खुलेआम यह आरोप लगाते हैं कि भारत की पत्रकारिता और मीडिया पूरी तरह बिक गया है, पूंजीपतियों के हाथों में चला गया है, मीडिया एक व्यापार बन गया है। मेरे विचार से इस कथन में पूरी सच्चाई है। मीडिया व्यापार बन गया है, यह बात पूरी तरह ठीक है। प्रश्न यह खड़ा होता है कि क्या किसी व्यापारी को हम विशेष अधिकार दे सकते हैं। क्या भारत का मीडिया व्यापार नहीं बन गया है। क्या ऐसे संवेदनशील समय में, जब किसी बात को छुपाने की आवश्यकता है और आप बार-बार पूछ रहे हैं, उस समय छुपाने वाले को क्या करना चाहिए। मेरे विचार से पुलिस वालों ने उस पत्रकार की पिटाई की, इसमें कुछ भी गलत नहीं था, चाहे पुलिस छुपाना चाहती थी अथवा पुलिस किसी जरूरी कार्य में व्यस्त थी। मैं हर समय देखता हूं कि पत्रकार किसी बात को चुपचाप खोजने की अपेक्षा अपनी सीमाएं तोड़ते रहते हैं। पत्रकार उस बात को जानना चाहता है कि सच क्या है और यह बात भी सच है कि पत्रकार इस प्रकार के सच को जानकर उसका दुरुपयोग भी करता है। इसलिए इस बात पर गंभीरता पूर्वक सोचने का समय आ गया है कि पत्रकारों की और टीवी वालों की सीमाएं क्या हों। इन सीमाओं का निर्धारण क्या हो। इन पर नियंत्रण कैसे हो और उनकी स्वतंत्रता कैसे बची रहे। मैं उस पुलिस वाले को बधाई देता हूं जिसने उस पत्रकार की पिटाई की थी।

एक पाठक अजीत कुमार चौधरी ने मुझे यह लिखा कि आप मीडिया के बारे में बहुत कुछ जानते हैं। आप सच्चाई स्पष्ट भी कर सकते हैं। मैं चाहता हूं कि आप अपने अनुभव की एक श्रृंखला शुरू करें, जिसमें "पत्रकारिता के अंदर का खेल" नाम से एक शीर्षक बनाएं और आज की पत्रकारिता जिस तरह दलाली और बिकाऊ मीडिया हो गया है, उस पर लेख लिखना शुरू करें ताकि अवैध कमाई करने वाली मीडिया के लोगों की पोल खोली जाए।

मैं 70 वर्षों से यह बात जानता हूं कि मीडिया एक व्यापार है, कोई समाज सेवा नहीं है। मीडिया के लोग भी समाज सेवा के नाम पर व्यापार करते हैं। जिस तरह व्यापारी दो नंबर का कार्य करता है, उस तरह मीडिया भी कुछ दलाली करता है, कुछ भ्रष्टाचार करता है, तो कोई आपत्ति नहीं हो सकती क्योंकि वह तो एक व्यापार है। यह जरूर है कि यदि मीडिया कोई तीन नंबर का कार्य करता है, अपराध करता है, यदि झूठ बोलकर किसी को बदनाम करता है, वैसी स्थिति में इस तरह के मीडिया की पोल खोलनी चाहिए। मेरे 70 वर्षों तक मीडिया से बहुत ही खट्टे-मीठे अनुभव मिले हैं। 70 वर्षों में मीडिया ने लगातार मेरा बहिष्कार किया है। यहां तक कि कई बार कुछ मीडिया के लोगों ने तीन नंबर के प्रयास भी किए, लेकिन मैं इन सारी कड़वाहट को भूलता रहा क्योंकि वह तो उसका व्यापार है। मैं मीडिया की ताकत भी जानता हूं, इसलिए मैं मीडिया से हमेशा डरता भी रहा। मैं यह भी जानता हूं कि मीडिया की ताकत के कारण हीं अरविंद केजरीवाल और नरेंद्र मोदी सरीखे लोग भी मीडिया को भरपूर पैसा देते रहते हैं। आज भी हमारे आसपास का मीडिया लगातार मेरा बहिष्कार करता है, लेकिन मैं उसका बुरा नहीं मानता क्योंकि यदि कोई कार्य किसी का व्यापार है, तो मैं उसके व्यापार में व्यवधान पैदा क्यों करूं। यह मेरा कार्य नहीं है, इसलिए मैं अपने मित्र के सुझाव से सहमत होते हुए भी इस दिशा में सक्रिय होने से असमर्थ हूं।

माध्यम वर्ग की ही चिंता में सभी राजनैतिक दल :-

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था मजबूत होने का यह मापदंड माना जाता है कि उस देश में सोना, चांदी और जमीन के मूल्य बहुत तेजी से बढ़ते हैं, क्योंकि जब तक आम लोगों को बचत नहीं होती है, तब तक सोना, चांदी और जमीन में पैसे नहीं लगते हैं। जब लोग सोना, चांदी और जमीन बड़ी संख्या में बेचने लग जाएं, तब माना जाता है कि आम लोगों की क्रय शक्ति घट रही है और लोग घाटे में जा रहे हैं, इसलिए इन तीनों वस्तुओं के दाम घट रहे हैं। वर्तमान भारत में सोना, चांदी और जमीन तीनों के मूल्य बहुत तेजी से बढ़ रहे हैं। बिल्कुल साफ दिखता है कि भारत में आम लोगों की क्रय शक्ति बहुत तेजी से बढ़ रही है। सोना, चांदी और जमीन का महंगा होना आम लोगों की संपन्नता का परिणाम है। दूसरी बात यह भी बिल्कुल साफ हो गई है कि पूरी आबादी में तीन भाग किए जाते हैं: 33% निम्न वर्ग, 33% मध्य वर्ग और 33% उच्च वर्ग। भारत का विपक्ष भी इस बात को स्वीकार कर रहा है कि निम्न वर्ग का पर्याप्त सुधार हो चुका है और अब मध्यम वर्ग पर मदद करनी चाहिए। अरविंद केजरीवाल ने भी यह खुलकर मांग की है कि अब मध्यम वर्ग पर खर्च किया जाए। भारत सरकार भी ऐसा ही समझ रही है और वर्तमान बजट में मध्यम वर्ग पर विशेष फोकस किया गया है। इससे ऐसा साफ होता है कि भारत के सभी राजनीतिक दल अब निम्न वर्ग की चिंता छोड़कर मध्यम वर्ग की दिशा में जा रहे हैं। लेकिन मैं इस बात से सहमत नहीं हूं, अभी भी श्रम का मूल्य बुद्धि की तुलना में बहुत कम है और जब तक श्रम और बुद्धि के बीच दूरी नहीं घटती है, तब तक मध्यम वर्ग की चिंता करना उचित नहीं है। मैं ऐसा मानता हूं कि न्यूनतम श्रम मूल्य, जो वर्तमान में ₹250 के करीब है, उसे ₹400 घोषित कर दिया जाए और उसके बाद मध्यम वर्ग की चिंता की जाए, तो न्याय संगत होगा।

भ्रष्टाचार रोकने का एक ही साधन 'निजीकरण' :-

मैं छत्तीसगढ़ के रायपुर शहर में रहता हूं। मैं छत्तीसगढ़ के भी वातावरण को प्रत्यक्ष देख रहा हूं और पूरे देश से भी निरंतर चर्चाएं और संपर्क हमारी टीम के लोग करते रहते हैं। नरेंद्र मोदी के आने के बाद भ्रष्टाचार बढ़ा या घटा यह एक विवादास्पद प्रश्न है। मेरा अपना अनुभव यह है कि नरेंद्र मोदी के पहले सरकार के उच्चतम स्तर पर भ्रष्टाचार था। वर्तमान समय में नरेंद्र मोदी, मोहन भागवत, आदित्यनाथ जैसे उच्चतम स्तर के लोग भ्रष्टाचार से मुक्त हैं, फिर भी यदि प्रशासनिक स्तर पर देखा जाए तो भ्रष्टाचार अभी घटा नहीं है। भ्रष्टाचार के स्वरूप में बदलाव दिख रहा है। अर्थात नरेंद्र मोदी के पहले जो भ्रष्टाचार था उस भ्रष्टाचार के माध्यम से गलत कार्य खुलेआम किए जा रहे थे। आप पैसा देकर सरकारी अफसर से भी और मंत्रियों से भी कोई भी गलत कार्य करवा सकते थे। अब धीरे-धीरे जिस तरह छापे पड़ने शुरू हुए हैं लोग जेल में जाने लगे हैं उससे भ्रष्टाचार करने वालों में एक डर पैदा हो रहा है इस डर के आधार पर भ्रष्टाचार का स्वरूप बदल रहा है। अर्थात सरकारी अफसर या नेता लोग गलत करने से तो डर रहे हैं लेकिन जो सही कार्य है वह भी बिना भ्रष्टाचार के नहीं हो रहा है। पहले यदि गलत कार्य को करने के लिए एक करोड़ रुपया लिया जाता था तो अब भी सही कार्य करने में एक करोड़ रुपया लग रहा है भले ही गलत कार्य तो अब लगभग नहीं के बराबर हो रहे हैं क्योंकि तेजी से भ्रष्ट लोगों में डर बढ़ रहा है। मैंने बहुत पहले भी कई बार लिखा है कि भ्रष्टाचार का सिर्फ एक ही समाधान है निजीकरण। सरकार के कानून अगर कम कर दिए जाएं तो भ्रष्टाचार के अवसर अपने आप खत्म हो जाएंगे अन्यथा आप डरा धमका कर भ्रष्टाचार को नहीं रोक सकते जैसा वर्तमान समय में हो रहा है। इसलिए मैं नरेंद्र मोदी जी से निवेदन करूंगा कि आप भ्रष्टाचार के अवसरों को समाप्त होने दीजिए अधिक से अधिक तकनीक का उपयोग कीजिए सरकारीकरण को खत्म कीजिए भ्रष्टाचार अपने आप कम हो जाएगा। फिर भी वर्तमान सरकार भ्रष्टाचार को रोकने के लिए जो प्रयत्न कर रही है वे प्रयत्न गलत नहीं हैं। अगर ऊपर के लेवल से भ्रष्टाचार कम हो जाएगा तो नीचे भी प्रभाव तो पड़ेगा ही।

घुसपैठ और आयात पर अंकुश होना चाहिए :-

मैंने अपने जीवन में कई बार लिखा कि अपनी अर्थव्यवस्था आत्मनिर्भर होनी चाहिए, हमें निर्यात बढ़ाना चाहिए, आयात घटाना चाहिए, हमें उत्पादन बढ़ाना चाहिए, खपत कम करनी चाहिए, लेकिन नेहरू परिवार ने मेरी बात कभी नहीं सुनी। नेहरू परिवार जीवन भर आयात बढ़ाता रहा, निर्यात घटाता रहा। नेहरू परिवार ने कभी तकनीक पर ध्यान नहीं दिया। नेहरू परिवार ने कभी श्रम का महत्व नहीं समझा। परिणाम हुआ कि हम लगातार कर्ज में डूबते रह गए। अब आज भी नेहरू परिवार और अरविंद केजरीवाल लगातार वस्तुओं के सस्ते होने की बात कर रहे हैं, इससे आयात बढ़ेगा, निर्यात घटेगा।

इसी तरह मेरी हमेशा यह मांग की थी कि विदेश से आने वाले मुसलमान को पूरी तरह रोक दिया जाए। जो चोरी-छिपे आते हैं, उन्हें या तो गोली मार दी जाए या उन्हें देश से निकाल दिया जाए। लेकिन मेरी बात नहीं मानी गई। नेहरू खानदान अपना रिश्तेदार समझकर विदेशी मुसलमान को भारत चोरी-छिपे आने के लिए

प्रोत्साहित करता रहा। अरविंद केजरीवाल और अखिलेश यादव भी इस प्रकार के मुसलमान को प्रोत्साहन देते रहे। अब पहली बार ट्रंप ने हमारी बात सुनी है। ट्रंप ने दोनों दिशाओं में अच्छा काम किया है। विदेश से चोरी-छिपे आने वालों को देश से बाहर निकालना शुरू कर दिया है, विदेश से आयात को कम करना शुरू किया है, निर्यात बढ़ाना शुरू किया है। मैं ट्रंप की इन दोनों नीतियों का समर्थन करता हूं। भारत को भी इसी तरह अपना निर्यात बढ़ाना चाहिए, आयात घटाना चाहिए। आयात पर टैक्स लगा देना चाहिए, निर्यात को फ्री कर देना चाहिए। मैं ट्रंप की नीतियों के अनुकरण का पक्षधर हूं। विदेश से चोरी-छिपे आए हुए मुसलमान को तुरंत निकाल देना चाहिए।

डीजल पेट्रोल की कुल खपत 150 लीटर प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति :-

6 फरवरी प्रातःकालीन सत्र नई समाज व्यवस्था पर चर्चा। भारत का केंद्रीय और प्रादेशिक कुल बजट मिलकर 80 लाख करोड़ का बनता है। भारत में डीजल, पेट्रोल की कुल खपत प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति गरीब डेढ़ सौ लीटर है। भारत सरकार को इससे 10 लाख करोड़ रुपए टैक्स के रूप में प्राप्त होते हैं। यदि हम बजट में डीजल, पेट्रोल का मूल्य दोगुना कर देते हैं, तो यह डीजल, पेट्रोल से मिलने वाला टैक्स करीब 35 लाख करोड़ हो जाएगा। इसी तरह बिजली, कोयला, गैस, मिट्टी तेल इन सब का भी मूल्य अगर ढाई गुना कर देते हैं, तो सरकार को करीब 60 लाख करोड़ रुपए टैक्स से मिलेगा। इस प्राप्त धन के उपयोग पर सोचा जा सकता है। हम इसे सभी प्रकार के टैक्स खत्म कर सकते हैं, सभी प्रकार की सब्सिडी बंद कर सकते हैं, अथवा सब कुछ इसी तरह चलने दे, तब भी प्रत्येक व्यक्ति को साढ़े तीन हजार रुपए प्रति व्यक्ति प्रति माह की सब्सिडी दे सकते हैं। पांच व्यक्ति के एक परिवार को एक वर्ष में करीब ₹200000 सब्सिडी के रूप में प्राप्त होंगे, और यदि इस सब्सिडी को केवल गरीब और मध्यम वर्ग तक दिया गया, तो यह प्रतिवर्ष 3 लाख रुपए तक हो सकते हैं। इस धन का कुछ अन्य तरह से भी उपयोग हो सकता है। हम आपको स्पष्ट कर दें कि हमारा उद्देश्य टैक्स कमाना नहीं है, बल्कि हमारा उद्देश्य आठ

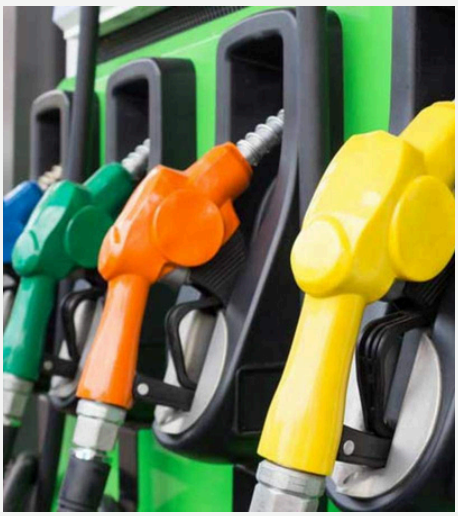

आर्थिक समस्याओं का समाधान करना है, और इस समाधान से जो टैक्स प्राप्त होगा, वह तो एक अलग की बात है। इस तरह यदि आप यह टैक्स ढाई गुना नहीं करना चाहते हैं, तो आप कम भी बढ़ा सकते हैं, लेकिन दोगुनी तक अवश्य करना चाहिए, अन्यथा प्रभाव नहीं पड़ेगा। इस आर्थिक बदलाव से सभी समस्याएं तो समाप्त होंगी ही, किसी भी प्रकार का दुष्प्रभाव नहीं पड़ेगा। इतना जरूर है कि उच्च वर्ग और मध्य वर्ग को कुछ नुकसान होगा और निम्न वर्ग को फायदा होगा। तकनीक का बहुत तेजी से विकास होगा, देश का उत्पादन बहुत बढ़ेगा, निर्यात बढ़ जाएगा, पर्यावरण ठीक हो जाएगा, लघु उद्योग सभी जिंदा हो जाएंगे, गांव में रोजगार हो जाएगा, शहरी आबादी गांव में आ जाएगी, भारत आर्थिक क्रांति कर सकेगा।

निकम्मे लोगों की समाज में बाढ़ आई हुई है :-

मैंने एक वह जमाना देखा है जब गरीब और कमजोर लोग सस्ती सुविधा चाहते थे, चाहे वह जहां से मिले, लेकिन आजकल एक नई बीमारी पैदा हो गई है कि लोग सस्ती सुविधा नहीं चाहते, बल्कि दूसरे सुविधा प्राप्त लोगों का विरोध करके ही अपने को संतुष्ट कर लेते हैं। ऐसे निकम्मे लोगों की आजकल समाज में एक बाढ़ आई हुई है। अनेक लोग यह मांग करते हैं कि मंदिरों में जो पूंजीपति लोग अधिक पैसा देकर तत्काल दर्शन कर लेते हैं, उस पर रोक लगनी चाहिए। अनेक लोग ऐसे भी मांग करते हैं कि जो लोग अधिक पैसा देकर रेलवे में सुविधाजनक यात्रा करते हैं, उन पर भी रोक लगनी चाहिए। मैं तो अनेक लोग ऐसे भी लोगों को देखता हूं जो कहते हैं कि प्राइवेट अस्पताल और प्राइवेट स्कूलों की फीस पर भी नियंत्रण होना चाहिए। कुछ लोग तो न्याय को भी सस्ता करने की बात करते हैं। अरे भाई, मैं आज तक नहीं समझा कि यदि कोई पूंजीपति अधिक पैसा देकर किसी प्राइवेट मंदिर, प्राइवेट अस्पताल या प्राइवेट स्कूल में अधिक सुविधाएं ले लेता है, तो तुम्हारा क्या चला गया। समान शिक्षा,

समान स्वास्थ्य, समान मंदिर दर्शन, समान यात्रा, कैसी-कैसी मूर्खतापूर्ण मांग होती है, और इस प्रकार की मांग केवल निकम्मे लोग ही करते हैं, अन्य नहीं। मैंने आज से 70 वर्ष पहले भी देखा है कि इसी प्रकार के निकम्मे लोगों ने एक अभियान चलाकर रेलवे में आरक्षित डब्बों की संख्या कम करवा दी थी। स्वतंत्रता के पहले जो चार श्रेणियां हुआ करती थीं, उन्हें बदलकर दो कर दिया गया था, क्योंकि समानता की एक मूर्खतापूर्ण आवाज प्रचारित कर दी गई थी। परिणाम क्या हुआ? आज रेलवे में 10 तरह की असमानताएं हैं। यह समानता शब्द संविधान में गलत तरीके से शामिल किया गया है, स्वतंत्रता शब्द होना चाहिए था। बड़े लोग अगर मंदिर की व्यवस्था में मदद कर देते हैं और गरीब लोगों को निशुल्क दर्शन हो जाता है, इसमें इन लोगों का क्या बिगड़ा है? अगर बड़े लोग अधिक पैसा देकर किसी सुविधाजनक स्कूल में पढ़ाई करते हैं और गरीब लोग सरकारी स्कूल में पढ़ते हैं, इनका क्या बिगड़ा है? मैं चाहता हूं कि यह गरीब और अमीर के बीच में झगड़ा पैदा करने वाले लोग हमारे समाज के शत्रु हैं, और इस तरह के लोगों से हमें दूरी बना लेनी चाहिए। आज भारत यदि स्कूल या चिकित्सा के मामले में यदि अन्य देशों के समान आगे नहीं बढ़ पा रहा है, इसका मुख्य कारण यही है कि हम समान शिक्षा, समान स्कूल, समान रेलवे, समान मजदूरी इस प्रकार की मांग करते हैं, जो घातक है।

घटती समझदारी पर काम करना सबसे ज्यादा जरूरी :-

वर्तमान दुनिया में भारत ही समस्याओं के समाधान की दिशा में प्रयत्न करता रहा है। वर्तमान दुनिया में भारत की तीन संस्थाएं ऐसी हैं जो इस दिशा में अलग-अलग तरीके से प्रयत्न करते हुए भी ठीक दिशा में जा रही हैं। उनमें संघ परिवार, गायत्री परिवार और आर्य समाज को मुख्य रूप से शामिल किया जा सकता है। संघ परिवार लगातार भारत में बढ़ रहा है, गायत्री परिवार लगभग स्थिर है और आर्य समाज धीरे-धीरे कमजोर हो रहा है, लेकिन फिर भी भारत की संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था पर इन तीनों की अमिट छाप है। फिर भी यह लगातार अनुभव किया जा रहा है कि कहीं न कहीं ऐसी कमजोरी जरूर है जिसके कारण समाज में नैतिक पतन बढ़ता जा रहा है और इस विषय पर गंभीरता से सोचने की जरूरत है। इसलिए इन तीनों संस्थानों के साथ भारत में एक चौथी संस्था सक्रिय हो रही है, जिसे

हम लोग मां संस्थान या मार्गदर्शन सामाजिक शोध संस्थान के नाम से पुकारते हैं। संघ परिवार में चरित्र पर बहुत जोर दिया जाता है। संघ में जितने चरित्रवान और ईमानदार लोग हैं, इतने कहीं दूसरी संस्था में नहीं मिल पाते हैं। गायत्री परिवार में सेवा भावी लोगों की संख्या अधिक है और आर्य समाज में सामाजिक बुराइयों के सुधारने पर अधिक ध्यान दिया जाता है। इन तीनों के अथक प्रयास के बाद भी समाज में नैतिक पतन हो रहा है। इसका कारण मां संस्थान यह समझता है कि समाज में तीनों संस्थाएं मिलकर चरित्र निर्माण तो कर रही हैं, लेकिन वैचारिक धरातल पर सारी दुनिया कंगाल हो गई है और भारत भी इस दिशा में कुछ नहीं कर पा रहा है। जब तक हम वैचारिक धरातल पर सक्रिय नहीं होंगे, तब तक इन तीनों संस्थानों के प्रयत्नों का पर्याप्त लाभ नहीं हो पाएगा, यद्यपि यह तीनों संस्थाएं पूरी ईमानदारी से अच्छा कार्य कर रही हैं। जैसे यदि किसी नाव से बंधी हुई रस्सी पेड़ से खोले बिना हम नाव को चलाने में कितनी भी मेहनत करें, तो लाभ नहीं होगा। इस तरह जब तक हम वैचारिक धरातल पर भी मजबूत नहीं होंगे, हमारी तर्क शक्ति अगर इसी तरह कमजोर रहेगी, तो इसका लाभ धूर्त उठा सकते हैं, जैसा अभी उठा रहे हैं। एक तरफ दुनिया में शराफत बढ़ती जा रही है, शरीफ लोगों की संख्या बढ़ रही है, तो दूसरी ओर दुनिया में धूर्त और अपराधियों की संख्या भी लगातार बढ़ती जा रही है। यह एक गंभीर चिंता का विषय है। दुनिया के आम लोगों में लगातार घटती जा रही समझदारी का समाधान हमें सबसे पहले करना होगा। इसलिए मां संस्थान ने यह प्रयास शुरू किया है कि हम एक ऐसा छोटा समूह तैयार करें जो वैचारिक तर्कशक्ति के माध्यम से समाज को नई दिशा दे सके। मां संस्थान निरंतर प्रयास करता है कि वह संघ परिवार, गायत्री परिवार और आर्य समाज के कार्यों में भी निरंतर मदद करता रहे। साथ ही हमारा यह भी प्रयास है कि हम चिंतन मंथन के माध्यम से समाज में एक वैचारिक कमी को दूर करें। सीधा का अर्थ यह है कि मां संस्थान का सबसे पहला कार्य है कि हम दुनिया में विचारों का निर्यात करना शुरू करें। विचारों का आयात बंद हो जाए। मुझे पूरा विश्वास है कि जल्दी ही हमारे प्रयत्नों के आधार पर हम वैचारिक कंगाली से मुक्ति पा सकेंगे। यदि मां संस्थान एक प्रतिशत लोगों को भी समझदार बना सका, तो हम इसे युग परिवर्तन के रूप में मान सकते हैं।

साम्प्रदायिकता और साम्यवाद की अब कोई पूंछ नहीं :-

दिल्ली के जो चुनाव संपन्न हुए हैं, उसमें कौन जीतेगा, कौन हारेगा, यह बात तो कल पता चलेगी। उससे मुझे कोई मतलब नहीं है। एक बात बिल्कुल साफ हो गई है कि इसमें नेहरू परिवार कहीं से भी नहीं जीत रहा है। दिल्ली चुनाव में नेहरू परिवार की दुर्गति होने वाली है, यह बात बिल्कुल स्पष्ट है। चुनाव प्रचार में भी नेहरू परिवार अकेला पड़ गया तथा अखिलेश यादव या अन्य विपक्षी नेता सब अरविंद केजरीवाल के साथ हो गए। इसके बाद भी मैं जानता हूं कि राहुल गांधी को अभी अक्ल नहीं आने वाली है। विपक्ष में राहुल गांधी अलग-थलग पड़ गए हैं। विपक्ष के दूसरे नेता संघ परिवार और नरेंद्र मोदी के बीच मतभेद पैदा करना चाहते हैं और यह राहुल गांधी इस बात को समझने को तैयार नहीं हैं। राहुल गांधी बीच में संघ और नरेंद्र मोदी की एक साथ आलोचना करते हैं, बल्कि कई बार वे संघ के प्रति बहुत अधिक कटु हो जाते हैं। एक तरफ अरविंद केजरीवाल तथा अन्य लोग हिंदुओं के साथ कुछ तालमेल करना चाहते हैं, दूसरी ओर राहुल गांधी सिर्फ मुसलमान और कम्युनिस्टों को जोड़कर चलना चाहते हैं। परिणाम आपके सामने है कि लगातार कांग्रेस पार्टी कमजोर होती जा रही है। दिल्ली के चुनाव में कांग्रेस पार्टी को एक प्रतिशत मुसलमान का भी वोट नहीं मिला, लेकिन

इसके बाद भी राहुल गांधी वही मुसलमान, कम्युनिस्ट और अपना परिवार तीन के आधार पर राजनीति करना चाहते हैं। अरे भाई राहुल, अब वह जमाना नहीं रहा कि आप इस प्रकार की संकीर्ण और सांप्रदायिक राजनीति करके भारत में आगे बढ़ पाओगे। मैं इस बात से बिल्कुल स्पष्ट हूं कि आपको हिंदुओं का साथ लेना ही पड़ेगा और आप इस प्रकार हिंदुओं का विरोध करके राजनीति जिंदा नहीं रख पाएंगे। सांप्रदायिकता का भारत में कोई भविष्य नहीं है। कल दिल्ली चुनाव में राहुल की नीतियों का और साफ परिणाम दिख जाएगा।

दो लोगों के आपसी सहमति पर सरकार को सर दर्द क्यों :-

किसी परिवार ने अपने एक नन्हे मुन्ने बच्चे को बेच दिया। खरीदने वाला खरीद रहा है, बेचने वाला बेच रहा है, सरकार को दर्द हो रहा है। मैंने तो यहां तक सुना है कि किसी अस्पताल में विदेश से आए हुए कुछ लोगों ने अपनी किडनी बदलवाई। किडनी देने वाला विदेशी, किडनी लेने वाला विदेशी, केवल भारत के अस्पताल में आकर उसने किडनी बदलवा दी, तो भारत सरकार को दर्द हो गया। भारत में इस तरह किडनी नहीं खरीदी बेची जा सकती हैं। अरे भाई, अगर कोई भारत में भी अपनी किडनी बेचता है और कोई खरीदता है, तो इसमें भारत सरकार को क्यों दर्द होता है? यह कौन सी मानवता है? किसी व्यक्ति ने किसी महिला को किराए पर लेकर उसे संतान पैदा कर दी, इसे कोख बेचना कहते हैं। भारत सरकार को इससे दर्द हो गया। बेचने वाली महिला, खरीदने वाला कोई अन्य व्यक्ति, दोनों की सहमति है, यह बिचौलियों को क्यों दर्द होता है? इससे सरकार का क्या लेना-देना है? मैं आज तक नहीं समझ सका कि सरकार इस प्रकार के मामलों में हस्तक्षेप क्यों करती है। यदि दो लोग किसी बात पर सहमत हैं, उस सहमति से सरकार उस पर नियम बना सकती है, लेकिन सरकार उसे रोक नहीं सकती। लेकिन हमारी सरकार है, मानवता के नाम पर ऐसे-ऐसे स्वतंत्रता में बाधा पहुंचाती है, जिसका खुलकर विरोध किया जाना चाहिए। स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। हमारी स्वतंत्रता पर तब तक कोई बाधा नहीं लगाई जा सकती, कोई सीमा नहीं बनाई जा सकती, जब तक हमने किसी अन्य की स्वतंत्रता का उल्लंघन न किया हो।

सांप्रदायिकता और तानाशाही की सभ्य समाज में कोई जगह नहीं :-

दिल्ली के भी चुनाव संपन्न हो गए हैं। कौन जीता, कौन हारा, क्यों हारा, इस पर सबके अलग-अलग विचार हैं। इस संबंध में मेरा विचार कुछ भिन्न है। दिल्ली के भी चुनाव में दो विचारधाराओं के बीच टकराव था। एक तरफ था हिंदुत्व की विचारधारा, संघ का परिश्रम और नरेंद्र मोदी का चेहरा, दूसरी तरफ थी साम्यवादी विचारधारा, मुसलमान की संगठन क्षमता और अरविंद केजरीवाल का चेहरा। इन दो के बीच ही सारी लड़ाई चल रही थी और दोनों के बीच हम लोग जीत गए और वे लोग हार गए। पूरे भारत में साफ-साफ दिख रहा है कि अब हिंदुत्व की विचारधारा, संघ की योजना और नरेंद्र मोदी का चेहरा यही सारे चुनाव जीतेंगे। अब अरविंद केजरीवाल को इस विषय पर सोचना है कि वह अब भी कम्युनिस्ट मुसलमान, इनके पीछे लगे रहेंगे या दल बदलकर हिंदू संघ के साथ हो जाएंगे। यह उनको सोचना है। हम लोगों ने अरविंद केजरीवाल से बहुत उम्मीद की थी, लेकिन सत्ता की लालच में अरविंद केजरीवाल ने सांप्रदायिकता का साथ दिया, तानाशाही का साथ दिया और उसका यह परिणाम आज देखने को मिल रहा है। अब अरविंद केजरीवाल को प्रायश्चित करना चाहिए। उस प्रायश्चित की सबसे पहली शुरुआत यह हो सकती है कि अरविंद केजरीवाल वक्फ कानून के मामले में हिंदू जमात का साथ दें। यहां से अरविंद केजरीवाल यदि शुरू करेंगे, तो शायद राजनीति में जिंदा रह सकते हैं, अन्यथा वही हाल होगा जो मुस्लिम सांप्रदायिकता का हो रहा है, साम्यवाद का हो रहा है, राहुल गांधी का हो रहा है। यह तो अरविंद केजरीवाल को सोचना है कि वह क्या करते हैं।

क्या कांग्रेस का अस्तित्व समाप्ति की ओर है :-

यह सच है कि पिछले 6 महीने से राहुल गांधी दुविधा में पड़े हुए थे। एक तरफ राहुल गांधी पर इस बात का दबाव था कि नरेंद्र मोदी को कमजोर करने के लिए पूरा विपक्ष एकजुट हो, दूसरी तरफ राहुल गांधी यह भी देख रहे थे कि हर प्रदेश में विपक्षी दलों के लोग कांग्रेस पार्टी को त्याग की सलाह दे रहे हैं और कांग्रेस पार्टी को लगातार कमजोर भी कर रहे हैं। केरल में प्रियंका और राहुल गांधी तक का विरोध साम्यवादियों ने किया। उत्तर प्रदेश में अखिलेश यादव ने एक भी जीतने लायक सीट कांग्रेस को नहीं दी। हरियाणा में भी अरविंद केजरीवाल ने जबरदस्ती घुसकर कांग्रेस को हराया। इसके पहले गुजरात, गोवा, कर्नाटक सब जगह अरविंद केजरीवाल कांग्रेस का विकल्प बनने की कोशिश करते रहे। यहां तक कि पंजाब में भी अरविंद केजरीवाल ने कांग्रेस को खत्म करने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी। राहुल गांधी के सामने यह संकट था कि वह नरेंद्र मोदी को कमजोर करने के लिए क्या कांग्रेस का अस्तित्व समाप्त होने दें। यहां तक कि दिल्ली के विधानसभा चुनाव के प्रारंभ में अरविंद केजरीवाल ने कांग्रेस पार्टी को संयुक्त मोर्चे से हटाने की धमकी दी थी और उसे धमकी में लगभग पूरा विपक्ष कांग्रेस के खिलाफ हो गया था। ममता बनर्जी ने तो बंगाल से कांग्रेस को खत्म ही कर दिया। इन परिस्थितियों में राहुल गांधी ने गंभीरता से सोचा कि क्या भारत के प्रधानमंत्री के रूप में नरेंद्र मोदी की जगह ममता बनर्जी, अरविंद केजरीवाल या किसी अन्य का स्थापित होना उचित है। कांग्रेस पार्टी दुविधा में थी कि इधर से भी कांग्रेस खत्म हो रही है और उधर से भी खत्म हो रही है। राहुल गांधी ने इस पर गंभीरता से विचार किया कि नरेंद्र मोदी ने कहीं भी राहुल या सोनिया गांधी के साथ उस तरह का व्यवहार नहीं किया जिस तरह ममता, अरविंद या अन्य लोग कर सकते हैं और राहुल को सबसे अधिक चोट लगी जब उत्तर प्रदेश में अखिलेश ने एक भी सीट नहीं दी। प्रश्न उठता है कि राहुल को क्या करना चाहिए था। इसलिए राहुल और प्रियंका ने बहुत सोच-समझकर यह निर्णय किया कि नरेंद्र मोदी अन्य लोगों की अपेक्षा कम बुरे हैं। मेरे विचार से राहुल-प्रियंका ने जो भी निर्णय किया वह स्थिति के अनुसार ठीक है और अन्य दलों को भी अपनी भूमिका पर गंभीरता से विचार करना चाहिए।

व्यवस्था परिवर्तन एकमात्र मार्ग, सत्ता परिवर्तन नहीं :-

मैं कल व्यवस्था परिवर्तन पर एक पोस्ट लिखी थी। यह सच है कि व्यवस्था परिवर्तन के लिए गांधी, जयप्रकाश और अन्ना हजारे ने पूरी ईमानदारी से प्रयत्न किया। यद्यपि उन प्रयत्नों का कोई अंतिम परिणाम नहीं निकल सका, फिर भी यह बात अंतिम रूप से सिद्ध है कि व्यवस्था परिवर्तन ही एकमात्र मार्ग है, सत्ता परिवर्तन इसका कोई समाधान नहीं है। इसलिए गांधी, जयप्रकाश और अन्ना हजारे की असफलता से सीख लेते हुए इस मार्ग पर नए तरीके से बढ़ने की आवश्यकता है। यही सोचकर हमारे मित्रों ने व्यवस्था परिवर्तन की दिशा में कार्य करना शुरू किया है। मैं जानता हूं कि ज्ञान यज्ञ की दिशा में संघ, गायत्री परिवार और आर्य समाज की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। दूसरी ओर लोकस्वराज में गांधी परिवार की अच्छी भूमिका हो सकती है। दुर्भाग्य से गांधी परिवार कम्युनिस्टों के मायाजाल में फंस गया। परिणाम हुआ कि गांधीवादियों ने पिछले 25 वर्षों से अपनी सारी शक्ति मोदी हटाओ में लगा दी, संपत्ति संग्रह में लगा दी, पदों के लिए लड़ाई में लगा दी। लेकिन यह भी दिखता है कि लोग स्वराज के लिए यदि कोई ईमानदार प्रयास शुरू होगा तो गांधी परिवार के लोग उसके साथ जुड़ने में आगे आ सकते हैं। अभी आपने देखा होगा कि दिल्ली में जो चुनाव हुए, उसमें साम्यवादियों ने भी 10 सीटों पर चुनाव लड़ा था और किसी सीट पर साम्यवादियों की सारी कोशिश के बाद भी मतों की संख्या 200 के ऊपर नहीं जा सकी। स्पष्ट है कि साम्यवाद लगभग मर गया है। अब गांधीवादियों को साम्यवाद से उम्मीद छोड़ देनी चाहिए। अब गांधीवादियों को लोक स्वराज की दिशा में आगे आना चाहिए। हम अपने गांधीवादी मित्रों से निवेदन करते हैं कि वह इस लोक स्वराज की दिशा में सक्रिय हों। हम चाहते हैं कि ग्राम सभाओं को 29 अधिकार मिले और ग्राम सभाओं को संविधान संशोधन में भी महत्वपूर्ण भूमिका मिले। इस संबंध में पूरे देश में एक वैचारिक क्रांति की आवश्यकता है। इस क्रांति का नेतृत्व नरेंद्र जी ने शुरू किया है और मेरे विचार से इस दिशा में गांधीवादियों को भी विचार करना चाहिए। मरी हुई साम्यवादी लाश अब गांधीवादियों के लिए उचित नहीं है। गांधी, जयप्रकाश, अन्ना हजारे के बताए मार्ग से ही आगे बढ़ना उचित हो सकता है।

मनुस्मृति और संविधान की तुलना सरासर गलत :-

मैंने कई बार लिखा कि राहुल गांधी को बोलते नहीं आता है, बिना समझे कुछ भी बोल देते हैं। कल उस नासमझ ने मनुस्मृति के बारे में कुछ इस तरह की बात कह दी जो एकदम मूर्खता वाली बात थी। राहुल गांधी ने मनुस्मृति और संविधान की तुलना की और उसने कहा कि भारत का संविधान मनुस्मृति की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त उसने मनुस्मृति के बारे में कुछ इस तरह की बात भी कह दी जो इलाहाबाद के कुंभ में आए हुए संतों को बहुत ही खराब लगी। संतों ने राहुल गांधी के खिलाफ एक प्रस्ताव भी पारित किया और उन्हें चेतावनी भी दी। मैं उस चेतावनी से कोई संबंध नहीं रखता। हिंदुत्व कोई संगठन नहीं है, इसलिए ना तो किसी को हिंदू से निकाला जा सकता है और ना ही कोई चेतावनी दी जा सकती है। यह एक अलग बात है। लेकिन राहुल ने यह कहकर मूर्खता तो की है। कहां मनुस्मृति और कहां संविधान। मनुस्मृति कब की बनी हुई है। मनुस्मृति में कुछ गलतियां भी हो सकती हैं जिनकी जगह पर हम नई व्यवस्था में सुधार कर सकते हैं। मनुस्मृति कोई ऐसा धर्म ग्रंथ नहीं है जिसे हम कुरान और बाइबल मानते हों। लेकिन संविधान में तो सैकड़ों बार संशोधन हो चुके हैं। यह नासमझ राहुल किस संविधान की बात कर रहे हैं। मनुस्मृति में आज तक कोई संशोधन नहीं हुआ है, भले ही नई-नई स्मृतियां बन गई हों, अभी भी बन सकती हैं, कोई प्रतिबंध नहीं है। लेकिन अंबेडकर का संविधान था, उसका तो सारा स्वरूप ही अब बदल गया है। तो यह नासमझ किस संविधान की तुलना मनुस्मृति से कर रहा है। मनुस्मृति को मानना किसी के लिए बाध्यकारी नहीं है, संविधान को मानना बाध्यकारी है। इसलिए मनुस्मृति और संविधान की तुलना नहीं हो सकती। मनुस्मृति संविधान से बहुत ऊपर है क्योंकि वह मानने-न मानने की स्वतंत्रता देती है। मेरे विचार से राहुल गांधी ने मनुस्मृति और संविधान की तुलना करके बहुत बड़ी मूर्खता की है, हिंदुओं का दिल दुखाया है। अगर राहुल में हिम्मत है तो क्या वह कुरान और बाइबल से संविधान की तुलना कर सकते हैं? गलतियां तो कुरान में भी होंगी, मनुस्मृति में भी हो सकती हैं, बाइबिल में भी हो सकती हैं, गलतियां कहीं भी हो सकती हैं। इसलिए मैं राहुल को सलाह देता हूं कि बोलना बंद करो, कम बोलो, गलतियां कम होंगी। अधिक बोलना कोई बुद्धिमानी का काम नहीं है।

टैक्स हमेशा उपभोक्ता अथवा उत्पादक देता है :-

मैंने यह बात कई बार लिखी है कि हमारे देश की सबसे बड़ी समस्या राजनीतिक व्यवस्था है। राजनेताओं ने राजनीति को व्यापार बना लिया है। वे दिन रात झूठ को सच बनाते रहते हैं। इसके अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं। आज मैं एक झूठ पर चर्चा कर रहा हूं। भारत में दो प्रकार के टैक्स लगते हैं: एक है प्रत्यक्ष कर और एक है अप्रत्यक्ष कर। प्रत्यक्ष कर आमतौर पर व्यापारी देता है और अप्रत्यक्ष कर किसी भी रूप में कोई व्यापारी नहीं देता; या तो उत्पादक देता है या उपभोक्ता देता है। क्योंकि अप्रत्यक्ष कर वस्तु पर होता है, व्यक्ति पर नहीं। कोई वस्तु जब कोई उत्पादक पैदा करता है और बाजार में बेचता है, तो उस वस्तु पर सरकार का टैक्स लग जाता है। वही वस्तु जब उसे खरीदने वाले से कोई तीसरा व्यक्ति खरीदता है, तो उस वस्तु पर फिर से कुछ कर लग जाता है। इस तरह वस्तु का मूल्य बढ़ता जाता है और सरकार का टैक्स भी बढ़ता जाता है। अंत में जो व्यक्ति वस्तु को खरीदता है, वह उस बढ़े मूल्य पर खरीदता है और बेचने वाला उस मूल्य पर बेचता है जो व्यापारी देता है। इस बेचने वाले और खरीदने वाले के बीच में टैक्स सरकार के पास चला जाता है और यह टैक्स व्यापारी इकट्ठा करता है और सरकार को देता है। इस तरह अप्रत्यक्ष कर कभी कोई व्यापारी देता ही नहीं है। हमारे राजनेताओं ने किसानों को यह समझा दिया है कि किसान कोई टैक्स नहीं देता है और उपभोक्ताओं को भी समझा दिया है कि उपभोक्ता कोई टैक्स नहीं देता है। इन दोनों को यह झूठ बता दी गई है कि टैक्स तो व्यापारी देता है, न उत्पादक देता है, न उपभोक्ता देता है। आश्चर्य है कि 70 वर्षों से इतना बड़ा झूठ समाज में सच के समान बनाकर रखा गया है। सारे मीडिया कर्मी, विचारक या अन्य लोग हमेशा समाज को यही समझाते रहते हैं कि किसान पर कोई टैक्स नहीं है, जबकि सच्चाई है कि व्यापारी पर यह टैक्स नहीं लगता; या तो किसान देता है, या उपभोक्ता देता है, या दोनों मिलकर देते हैं। मैं आपसे निवेदन करता हूं कि यह सच्चाई समाज के सामने आने दीजिए कि कृषि उत्पादकों पर बहुत बड़ा टैक्स सरकार वसूल करती है और समाज में झूठ बोलकर भ्रम फैला देती है।

राइट टू रिकॉल राजनेताओं पर समाज का अंकुश :-

दोपहर सत्र में मैंने आपको बताया था कि राजनेता कितने चालाक होते हैं। इसका एक उदाहरण आपको दिया था कि किस प्रकार वे टैक्स में चालाकी करते हैं। अभी सायंकालीन सत्र में मैं आपको दूसरा उदाहरण दे देता हूं। भारत के राजनेता भले ही जान दे दें, लेकिन कभी राइट टू रिकॉल को स्वीकार नहीं करेंगे, क्योंकि राइट टू रिकॉल का यदि प्रावधान बन गया, तो राजनेताओं पर समाज की एक तलवार लटक जाएगी और यह राजनेताओं के लिए बहुत घातक होगी। इसलिए स्वतंत्रता से लेकर अब तक कोई भी राजनेता राइट टू रिकॉल के लिए तैयार नहीं होता है। इनकी चालाकी देखिए कि बीच में जब बहुत दबाव पड़ा, तो इन लोगों ने एक राइट टू रिजेक्ट का झुनझुना पकड़ा दिया और कुछ तथाकथित नेता, जो नेता बनने के चक्कर में थे, उन सब लोगों ने राइट टू रिजेक्ट के ही पक्ष में आवाज लगाना शुरू की। सच बात यह है कि राइट टू रिकॉल का बहुत महत्व है और राइट टू रिजेक्ट का शून्य महत्व है। क्योंकि राइट टू रिकॉल चुनाव के बाद आता है, तो राइट टू रिजेक्ट तो चुनाव के पहले का है, उसका क्या महत्व है। फिर भी मुझे आश्चर्य होता है कि नेता लोग, जो किसी पार्टी से जुड़े होते हैं, वे दूसरी पार्टी के लोगों को राइट टू रिजेक्ट समझाते हैं, जिसका कोई महत्व नहीं है। इसलिए मेरा आपसे निवेदन है, यदि कोई व्यक्ति राइट टू रिजेक्ट की बात करता है, तो वास्तव में वह किसी पार्टी का नेता है और वह झूठ फैला रहा है। मैं फिर से आपको कहता हूं कि राइट टू रिजेक्ट एक झुनझुना है, हमें धोखा देने के लिए सरकार के द्वारा दे दिया गया है। हमें हमेशा राइट टू रिकॉल के पक्ष में आवाज उठानी चाहिए।

वस्तुयों के मूल्य घटने-बढ़ने पर छाती पीटना फ़िज़ूल :-

एक मित्र ने सूचना दी है कि अमूल दूध में अपने उत्पादों के दाम घटाने का निश्चय किया है। मैंने यह भी बाजार में सुना है कि टमाटर बहुत सस्ता हो गया है, लहसुन भी सस्ता हो गया है। मैं आज तक नहीं समझा कि बाजार में वस्तुओं का मूल्य कम होता है, तो आम लोगों को लाभ होता है या नुकसान होता है। मेरी जानकारी के अनुसार वस्तुओं के मूल्य कम-ज्यादा होने से न आम लोगों को नुकसान होता है और न ही लाभ होता है, क्योंकि कुछ वस्तुओं के मूल्य कम होते हैं, कुछ के बढ़ते हैं। उपभोक्ता अधिक पैसा देता है, उत्पादक को अधिक पैसा मिलता है, जो बिचौलिए हैं, उनके लाभ स्थिर हैं, चाहे वस्तुओं के मूल्य कम हों या अधिक हों। नेता लोग दिन रात छाती पीटते रहते हैं: वस्तु का मूल्य बढ़ गया, तो नेता छाती पिटेगा; घट गया, तब भी वही रोएगा। नेताओं को वही रोना-धोना है। मुझे 85 वर्ष हो गए, यही देखते हुए कि वस्तुओं के मूल्य कम होने से कोई नुकसान होता है, न बढ़ने से कोई नुकसान होता है। आज तक भारत में वस्तुओं के मूल्य का कभी कोई प्रभाव नहीं पड़ा। यह अवश्य है कि अगर किसी वस्तु का मूल्य घटता है, तो उस वस्तु के उत्पादकों को नुकसान होता है और किसी वस्तु का मूल्य बढ़ता है, तो उसे वस्तु के उपभोक्ताओं को नुकसान होता है, लेकिन कुल मिलाकर वस्तुओं के मूल्य घटते-बढ़ते नहीं हैं। जितनी मुद्रा स्थिति होती है, उतनी ही लोगों की आय भी बढ़ जाती है, इसमें कोई फर्क नहीं पड़ता है। इसलिए छाती पीटने का नाटक करने वालों से आप दूर रहिए।

घुसपैठी मुसलमान पलायन को मजबूर :-

मैंने अपने पूरे जीवन में यह लगातार देखा कि विदेशी मुसलमान को भारत सरकार अपने रिश्तेदार के तरीके से सम्मान देती थी। अगर विदेशी आने वाला मुसलमान है, तो उसे सब प्रकार की सुविधा दी जाती थी। लेकिन एक जमाना ऐसा आ गया है कि भारत के कुछ विदेशी मुसलमान डर से भाग-भाग कर भारत छोड़ रहे हैं। अभी कल ही पता चला कि छत्तीसगढ़ के रायपुर शहर से तीन मुसलमान, जो बांग्लादेश से आए थे, वह रायपुर छोड़कर विदेश जाना चाह रहे थे, लेकिन उन तीनों को मुंबई में गिरफ्तार कर लिया गया। अभी पांच-सात दिन पहले ही बांग्लादेश बॉर्डर पर सात ऐसे मुसलमान को पकड़ा गया, जो चोरी-छिपे भारत आए थे और फिर भारत से डर कर बांग्लादेश जाना चाह रहे थे। यह बदलाव कैसे आया, यह आश्चर्यजनक है, क्योंकि कम्युनिस्ट मुसलमान और नेहरू परिवार तो बांग्लादेशियों को यहां सब प्रकार की सुविधा देकर रखना चाहता है। इसके बाद भी ये लोग भारत छोड़कर जा रहे हैं, तो यह इन सबके लिए डूब मरने की बात है। इन लोगों को रिश्तेदारों के समान विदेश से यहां बुला-बुलाकर बसाया गया था और ये यहां से इस तरह निराश होकर भारत छोड़ रहे हैं। इस पर कांग्रेस पार्टी को गंभीरता से विचार करना चाहिए कि आखिर भारत से ये चोरी-छिपे आए हुए मुसलमान भारत क्यों छोड़कर जा रहे हैं। अगर ये विदेश चले गए, तो फिर कांग्रेस पार्टी का भविष्य क्या होगा, यह भी सोचने की बात है। इसलिए मैं फिर से यह कहूंगा कि इस विषय पर कांग्रेस पार्टी अपनी स्थिति साफ करें।

ज़ूम "चर्चा कार्यक्रम" से :-

परिवार व्यवस्था टूटने में आधुनिक महिलाओं की भूमिका :-

31 जनवरी के रात्रिकालीन चर्चा में समाज में महिला-पुरुष के नाम पर बन रहे वर्गों से हो रहे नुकसान पर विस्तृत विचार-विमर्श किया गया। वर्ग निर्माण व्यक्ति के स्वभाव में आ गया है। यह भारतीयों में अपने आप नहीं आया, बल्कि षडयंत्र के तहत यह हमारे मन मानस में डाला गया। महिला-पुरुष के नाम पर जो वर्ग निर्माण किया जा रहा है, वह देश को कमजोर करने और परिवार को तोड़ने का एक पश्चिमी षडयंत्र मैं मानता हूं। हजारों वर्ष पूर्व परिवार में पुरुष प्रधानता आरक्षण के रूप में स्थापित हुई, तथा उस प्रधानता ने समाज में पुरुष प्रधान व्यवस्था का स्वरूप ग्रहण कर लिया। यही एक गलती ने महिला आंदोलनजीवियों और अन्य समाज तोड़क लोगों को वर्ग निर्माण करने का मौका दे दिया। कुछ पुरुषों द्वारा महिलाओं पर हो रहे अन्याय और अत्याचार ने ऐसे लोगों को और बल प्रदान किया। स्त्रियों के अंदर इन महिला आंदोलनजीवियों ने स्वतंत्रता, समानता और अधिकार की भूख जगाई। इनसे षडयंत्र में आकर बहुत सारी स्त्रियों ने अपना जीवन, अपना परिवार बर्बाद कर लिया। इन्हीं लोगों के कारण समाज व्यवस्था में राजनीतिक व्यवस्था का हस्तक्षेप बढ़ता चला जा रहा है। महिला और पुरुष दो वर्ग नहीं होने चाहिए। स्त्री-पुरुष एक दूसरे के पूरक हैं, विकल्प नहीं। मैं महिलाओं को समान स्वतंत्रता और समान अधिकार देने का पक्षधर हूं। लेकिन समाज में कुछ लोग स्त्री और पुरुष को एक दूसरे का प्रतिद्वंदी या प्रतिस्पर्धी बना दे रहे हैं, मैं उसका विरोधी हूं। यदि किसी महिला को पुरुष प्रधान व्यवस्था अमान्य है, तो वह ऐसे परिवार में शादी करने के लिए स्वतंत्र है जो उसे समान स्वतंत्रता और अधिकार दे या जो परिवार महिला प्रधान व्यवस्था स्वीकार करने को तैयार हो। मैं यह नहीं कहता कि अभी तक जो महिलाओं के विषय में समाज में चल रहा है, वह एक अच्छी स्थिति है, बल्कि मैं मानता हूं कि इसमें बहुत सुधार की आवश्यकता है। परंतु सुधार के नाम पर परिवार तोड़क कानून बनाना या वर्ग निर्माण करना, यह देश और समाज के लिए विनाशकारी है। न सभी महिलाएं एक जैसी होती हैं, न पुरुष। आज कहीं पुरुष महिला से पीड़ित हैं, तो कहीं महिला पुरुष से। महिलाएं परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था के सुचारू संचालन में बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। वर्तमान परिवार व्यवस्था टूटने में आधुनिक महिलाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। परंपरागत परिवार व्यवस्था में सुधार करके ऐसी महिलाओं का हस्तक्षेप रोका जा सकता है। आधुनिक महिलाओं के पास कोई पारिवारिक या रचनात्मक कार्य नहीं होता है, उन्हें भावनाओं का व्यवसाय करके ही राजनीति, मीडिया या समाज में अपना सम्मान बनाए रखना पड़ता है। ऐसी महिलाओं को अपने परिवार से दूर रखना ही आपके लिए हितकर होगा।

समाज को नाबालिक बताने की राजनीति :-

२१ जनवरी रात्रिकालीन ज़ूम चर्चा कार्यक्रम में ग्रामसभा सशक्तिकरण विषय पर चर्चा विमर्श किया गया। संसार में अधिकार और शक्ति की छीना झपटी का खेल पुराना है। हर धूर्त व्यक्ति खुद को स्वतंत्र और दूसरे को परतंत्र रखना चाहता है। स्वतंत्रता के बाद यही कार्य हमारे देश के नेताओं ने किया। समाज को नाबालिक मानकर खुद को समाज का मालिक घोषित कर दिया। उस समय के नेताओं ने कहा कि जैसे-जैसे समाज में लोकतंत्र की समझ बढ़ेगी वैसे-वैसे समाज की भागीदारी बढ़ती जाएगी, लेकिन आज तक समाज की भागीदारी नहीं बढ़ी। हास्यास्पद तो यह कि इसी समाज द्वारा चुनकर भेजे जाने वाले नेता शायद अभी भी समाज को नाबालिक मान रहे हैं। समाज में तंत्र का हस्तक्षेप लगातार बढ़ता ही जा रहा है। देश को राष्ट्रीय स्वतंत्रता तो मिल गई लेकिन सामाजिक स्वतंत्रता अभी मिलना बाकी है। देश की तीसरी सरकार कहे जाने वाली ग्रामपंचायत राज्य का एजेंट मात्र बनकर रह गई है। केंद्र से प्रदेश अपने अधिकारों के लिए छीना झपटी तो कर लेता है लेकिन पंचायतो को अधिकार देने से कतराता है। 73 वें संविधान संशोधन में ग्राम पंचायत को 29 अधिकार दिए गए थे लेकिन प्रदेश के विवेक पर छोड़ देने के कारण, वह विधायी अधिकार अभी तक नहीं मिला। जिस तरह केंद्र और प्रदेश की सरकार समाज बनता है लेकिन समाज के पास कोई विधायी अधिकार नहीं है। वैसे ही ग्रामसभा ग्राम पंचायत का निर्माण करती है लेकिन इसके पास कोई विधायी अधिकार नहीं है, सिवाय कुछ कार्यपालिक अधिकार के। ग्राम पंचायत में क्या होगा! कैसे होगा! यह सरकार तय करती है, ग्राम सभा को सिर्फ प्रस्ताव के रूप में निवेदन भर करने का कार्यपालिक अधिकार है। सरकार अभी भी ग्रामवासियों को नासमझ मानती है। सरपंच/प्रधान सरकारी अफसरों के गुलाम होते है। उनको भी इसी गुलामी में आनंद आता है, क्योंकि अफसरो के संरक्षण में उन्हें भ्रष्टाचार करने का अवसर मिलता है।

गांधी जी पंचायती राज व्यवस्था चाहते थे लेकिन नेता ऐसा कभी भी नहीं चाहते, यह भले ही नाम के साथ गांधी लगाए या अपने को गांधी का अनुयाई घोषित करें। आज पंचायत प्राणहीन है, क्योंकि इनके पास कुछ है ही नहीं। सरकारी योजनाओं की राहत पर चलने वाली इन पंचायतों से ना लोकशक्ति निकल सकती है ना लोकयोजनाएं। अभी तो पंचायतें लोकतांत्रिक सत्तावृत्त के बाहर एक अत्यंत कृत्रिम एवं ऐच्छिक संस्था बनी हुई है। गांधी जी भारतीय संविधान में ग्राम स्वराज की अवधारणा के अभाव से बहुत दुखी थे। शासन से मुक्त हुए बिना ना ग्राम स्वराज आ सकता है और ना ही ग्राम स्वावलंबन।

ZOOM एप्लीकेशन पर होने वाले "चर्चा कार्यक्रम" में कोई भी जुड़ सकता है। विचारधारा, लिंग, आयु आदि का भेद कार्यक्रम में महत्वहीन है। स्वतंत्र चर्चा कार्यक्रम से जुड़ने के लिए सम्पर्क करें- 8318621282; 7869250001

ग्राम स्वराज की अवधारणा है कि सरपंच के अधिकार गांव की अमानत है, ना कि उसका स्व-अर्जित अधिकार। इसी अवधारणा को लेकर समाजविज्ञानी बजरंग मुनि जी ने नई समाज रचना के उद्देश्य से छत्तीसगढ़ के रामानुजगंज विकासखंड के 130 गांव में ग्रामसभा सशक्तिकरण अभियान चलाया। इसके पांच आधार थे - (1) लोक और तंत्र के बीच दूरी कम करना यानी ग्राम सभाओं को 29 अधिकार दिलाना (2) अहिंसक समाज रचना (3) वर्ग विद्वेष को वर्ग समन्वय में बदलना (4) भ्रष्टाचार मुक्त ग्राम पंचायत (5) अपने स्वयं की भूमि के उत्पादन और उपयोग की वस्तुओं को कर मुक्त कराने का शासन से निवेदन।

मुनि जी ने बताया कि ग्रामसभा सशक्तिकरण अभियान का आशय है कि चुना हुआ सरपंच ग्रामसभा से ऊपर ना होकर नीचे होगा। लोकतंत्र में लोक मालिक और तंत्र मैनेजर होता है। ग्रामसभा लोक है और सरपंच तंत्र। ग्रामसभा के ऊपर सरपंच को स्थान देना स्वराज के भावना के विपरीत है। ग्राम सभाओं को विधायी अधिकार देकर स्वतंत्र किया जाना चाहिए। मैं यह नहीं कहता हूं कि इससे सभी समस्याओं का समाधान हो जाएगा लेकिन समस्याओं के निराकरण की पृष्ठभूमी अवश्य बन जाएगी। सभी समस्याओं का समाधान है - संविधान निर्माण और संशोधन में ग्रामसभा को महत्वपूर्ण भूमिका दी जाए। ग्रामसभा सशक्तिकरण लोकस्वराज की दिशा में एक कदम मात्र है। इससे समाज सीखेगा की राष्ट्रीय संविधान के निर्माण और संशोधन में उसकी कैसी भूमिका होगी! क्या फायदे होंगे! इससे समाज में सज्जन शक्तियां मजबूत होगी और धूर्त शक्तियां कमज़ोर होगी।

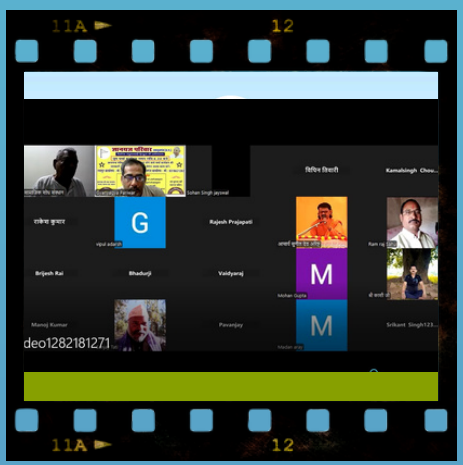

आप पाठकों के मांग पर ज्ञान तत्त्व 453 वें अंक के बाद पुनः **नरेन्द्र सिंह जी** के उपन्यास की अगली कड़ी प्रकाशित की जा रही है -...

~ जीवन पथ ~

... ... लेकिन तुम्हारा स्पष्टीकरण मुझे तुम्हारी देश के संविधान के प्रति कंठा के अतिरिक्त और कुछ दिखायी नहीं देता है विवेक। तुम भारत के संविधान का पुनः अध्ययन करो, एक दम से सम्पूर्ण संविधान की विषय-वस्तु का उच्चारण तो नहीं किया जा सकता है लेकिन अनुच्छेद बारह से इक्यावन तक अर्थात भाग तीन व चार को देखो और उनमें स्थापित धारणाओं से अपने विचारों की तुलना करो। शायद तब तुम अपनी कुंठा से मुक्त हो जाओगे और बाकी संविधान का सहजता से अध्ययन करके यह समझ सकोगे कि दोष व्यवस्था के नियमन में नहीं बल्कि व्यक्तियों द्वारा उसकी स्वीकारोक्ति में है। मेरे विचार से तुम्हें अपना भ्रम दूर करना चाहिए। .....आदित्य, विवेक के स्पष्टीकरण पर गम्भीर प्रश्न सूचक टिप्पणी करता है। इस पर विवेक, प्रोफेसर श्रीवास्तव की ओर देखते हुए अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत करता है-

मैं देशकाल परिस्थिति के महत्व को समझते हुए तुम्हारी कठोर भाषा को स्वीकार करता हूँ आदित्य! सच में ऐसे कठोर और तीक्ष्ण प्रश्न सत्य की विवेचना करने में हमारी सहायता करते हैं। संविधान के भाग तीन में व्यक्ति के मूल अधिकारों की विवेचना तथा समाज में व्यवस्था की नीतियों की संकल्पना कैसी होगी, संविधान के भाग चार में स्थापित की गयी है। हाँ प्रश्नगत स्थिति को स्पष्ट करने हेतु यहाँ पर मैं संविधान के भाग चार में वर्णित, व्यवस्था के प्रवर्तन हेतु विभिन्न निर्देशों के रूप में स्थापित उपबन्धों की विषय-वस्तु पर एक टिप्पणी करना चाहुँगा। 'प्रबन्ध' के तात्विक अर्थ को समझें तो यह कहना उपयुक्त होगा कि किसी भी कार्यकारी इकाई के लिए व्यवस्था के नियामक द्वारा निर्धारित उसके कार्य का निर्वहन बाध्यकारी होता है। भारत के संविधान के भाग चार (अनुच्छेद छत्तीस से इक्यावन) में वर्णित नीति निर्देशक तत्वों पर भी प्रबन्ध का यह नियम अक्षरशः लागू होता है। समाज न तो किसी आदर्श की स्थापना के लिए और न किसी आदर्श ग्रन्थ के रूप में संविधान का निर्माण करता है, बल्कि उसमें समाज की व्यवस्था के उन प्रावधानों का नियमन होता है जिनके द्वारा एवं अन्तर्गत विधियों का नियमन करके राज्य, व्यवस्था करता है; किन्तु यह निश्चित है कि राज्य के लिए उन उपबन्धों का मानना बाध्यकारी होता है, क्योंकि स्वयं समाज सम्प्रभुता के मूल स्रोत के रूप में उनका नियमन करता है। 'भारत राज्य' भी प्रबन्ध के इस नियम को मानने के लिए बाध्य होना चाहिए जो कि वह नहीं है। हमारे संविधान की भाषा में 'प्रयास' (देखें अनुच्छेद 38 खण्ड (1) व (2)) जैसे शब्दो का घाल-मेल करके राज्य को यह निषेधात्मक अधिकार दे दिया गया है कि वह व्यवस्था के संवैधानिक प्रावधानों को इच्छानुसार स्वीकार करे या न करे! संविधान के उपबन्धों में भाषा के अनुशासन का होना आवश्यक होता है, ऐसा न होने पर संविधान के अन्तर्गत बनने वाली विधियां दिशाहीन हो जाती हैं। जिसे नीति की अवहेलना कहना ठीक रहेगा। इस विषय की विवेचना करते हुए मैं यह भी कहुँगा कि छब्बीस जनवरी उन्नीस सौ पचास के बाद देश में भारतीय राज्य व्यवस्था ने क्या किया है, क्या इसकी विवेचना करने की आवश्यकता है या समाज के यथार्थ का प्रत्यक्ष अनुभव करने से हमे प्रश्न का उत्तर मिल जाता है। दूसरी ओर कई बार व्यक्तियों द्वारा संवैधानिक उपबन्धों को स्वीकार न करना व्यवस्था की असफलता के कारणों को नहीं छुपा सकता है। देश के समाज का सर्वेक्षण करके मैने यह अनुभव प्राप्त किया है कि निश्चय ही दुनिया भर के देशों में रहने वाले समाज का अधिकाश भाग अपने संविधान की भाषा में वर्णित शब्दों एवं विषय-वस्तु का शायद ही कभी विश्लेषण करता हो! मेरा दावा है कि किसी भी देश में ऐसे लोगों की तादाद बहुत कम मिलेगी। इसका कारण जो भी हो लेकिन हमारे सामने प्रस्तुत प्रश्न का उत्तर यह है कि समाज, संविधान की भाषा का विश्लेषण नहीं करता है बल्कि अपने यथार्थ का विश्लेषण करता है। तुम यह निष्पक्ष निर्णय करो आदित्य कि भारत की तमाम स्थिति उसे एक सफल समाज के रूप में स्थापित करती है या असफल राज्य के रूप में, संवैधानिक व्यवस्था के अन्य दोष तो चाहे जब गिन लेना!

लेकिन यह गलती किसकी है व्यक्ति की या संवैधानिक व्यवस्था की! क्या उसे व्यक्ति ने स्थापित नहीं किया है या यह स्वयं स्थापित हुई है, इसे किसका दोष कहें? .....वह उससे पुनः पूछता है।

व्यक्ति तो उत्तरदायी होगा ही, क्योंकि यही कारक भी है और यही भुक्तभोगी भी। यदि व्यक्ति का बौद्धिक स्तर ऐसा न होता तो मानव जाति भी अन्य जीव-जातियों की तरह प्राकृतिक अवस्था में ही जीवन व्यतीत करती रहती! किसी मानवकृत व्यवस्था का तब अस्तित्व ही कहाँ होता? लेकिन जिसकी हम चर्चा कर रहे हैं ऐसा सब कुछ विद्यमान है। मानवकृत व्यवस्था स्वतः ही कैसे स्थापित हो सकती है, आखिर में इसका आधार तो मनुष्य की इच्छा ही है। दुनिया भर में संवैधानिक व्यवस्थाएं भी इसी आधार पर जन्म लेती हैं। जिन कारणों से मनुष्य को यह बोध हुआ है कि जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए किसी व्यवस्था की आवश्यकता है, वही कारण हमे यह एहसास भी कराते हैं कि उस व्यवस्था का ढाँचा कैसा हो और वही कारण हमारे सामने यह तथ्य भी प्रस्तुत करते हैं कि संविधान शब्द का अर्थ क्या है? इसकी परिभाषा क्या है? यह परिस्थिति के विश्लेषण का विषय है, मनुष्य के तत्व-दर्शन के विस्तार का विषय है। .....वह बडी श्रद्धा से एक बार प्रोफेसर श्रीवास्तव की तरफ देखता है और आगे कहता है- तुमने व्यवस्था के दोष को सिद्ध करने का प्रश्न उठाया है आदित्य! इस विषय में मेरा कहना यह है कि व्यवस्था के प्राकृतिक स्वभाव के आधार पर इसकी स्थापना करने हेतु हम सामाजिक स्तर पर किसी भी विषय की व्यक्तिगत इच्छाओं को महत्व नहीं दे सकते हैं। स्वतन्त्रता किसी इकाई से शुरू करके विषयवस्तु की अन्तिम संख्या तक, व्यवस्था के स्तर के अनुरूप उसके अधिकार और कर्तव्यों

"अब तक आपने पढ़ा कि काबुल का मशहूर व्यापारी 'मसूद खां' वहां के सत्ता संघर्ष के कारण बिगड़े माहौल से विस्थापित हो दिल्ली में अपनी बेटी 'सिमी' और बेटे 'रियाज' के साथ गुज़र बशर करने लगे। सुहृद शख्सियत श्रीवास्तव की मदद और मार्गदर्शन में उनका पूरा परिवार फलने फूलने लगता है। प्रो. श्रीवास्तव अभी अपने विद्यार्थियों के साथ "चर्चा" के माध्यम से उनकी जिज्ञासाओं का समाधान कर रहे हैं।..."

का बोध कराती है। तदउपरान्त उसका व्यवस्था के रूप में नियमन होता है। व्यवस्था का जो प्रारूप व्यक्ति, परिवार और समाज के बीच अन्य वर्गवादी स्तर को संवैधानिक मान्यता प्रदान करता है वह न व्यवस्था हो सकती है और न संविधान का कोई गुण। समाज के ढाँचे में वर्ग समन्वय करना समाज का कार्य होता है, यह कभी भी संविधान के द्वारा राज्य का गुण नहीं बन सकता है। क्योंकि संविधान के ढाँचे में समाज द्वारा नीति स्थापित की जाती है। अर्थात नीति का नियामक संविधान नहीं बल्कि समाज होता है। हाँ संविधान का यह गुण होना ही चाहिए कि वह समाज से प्राप्त शक्ति को राज्य के द्वारा विधि के रूप में प्रयोग करके किसी भी नीति विरूद्ध कार्य का दमन करे।....जिस संविधान में व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए उपयुक्त बाध्यकारी निर्देश स्थापित नहीं होते हैं, ऐसा संविधान, संविधान के मूल अर्थ की पुष्टी नहीं करता है। ऐसे दस्तावेज निर्वाचित गणों द्वारा या विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा लिखित भले ही हों लेकिन उसे संविधान नहीं कहा जा सकता है और जो व्यक्ति-मण्डल ऐसी व्यवस्था की स्थापना करता है वह समाज का दोषी होता है। यह विचार हमे किसी स्थापित आदर्श की अवहेलना के रूप में स्वीकार नहीं करना चाहिए बल्कि व्यवस्था के मूल-भूत चरित्र को समझना चाहिए। ....विवेक अपना स्पष्टीकरण पूरा करता है तो क्लास रूम में चुप्पी छा जाती है। जिसे भंग करते हुए इस बार सिमी उससे प्रश्न करती है-

विवेक! अभी कुछ समय पहले तुमने आस्था और धर्म के सम्बन्ध का विरोध किया था। इस विषय में मेरा यह प्रश्न है कि जब व्यक्ति आस्था का त्याग कर देगा तो वह धार्मिक कैसे बन सकेगा? क्या तुम स्वयं को इस विषय से सहमत करते हो, करते हो तो कैसे? क्योंकि धर्म, आस्था से भी अलग कोई विषय है इसे दुनिया की किसी भी संस्कृति में परिभाषित नहीं किया गया है। क्या, तुम स्वयं के द्वारा प्रस्तुत दृष्टिकोण को इस धारणा से भी ज्यादा महान मानते हो जिसमें विश्व भर के समाज ने आस्था को धर्म के मर्म के रूप में स्वीकार किया है। समाज में कहीं कोई आस्था का अनुष्ठान आहूत होता है तो लोग उसे सहज भाव से धार्मिक कार्य के रूप में स्वीकार करते हैं। क्या तुम इस तथ्य को नकार सकते हो?